डाक पंजीयन क्र. : म.प्र./भोपाल/367/2024-26
आर.एन.आई. क्र. : 56428
टाइटिल कोड : MPHIN 09566
प्रेषण : प्रतिमाह दिनांक 7-8
वर्ष 36 अंक 12
(मानस समाचार/मानस भारती सहित)

प्रकाशन दिनांक 05 सितम्बर 2025
वर्ष 52 अंक 09
भाद्रपद-आश्विन मास 2082
पृष्ठ संख्या 36
मूल्य 20/-

तुलसी मानस भारती

तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश की अध्यात्म, संस्कृति और संस्कार पत्रिका

आनन्दकानने ह्यस्मिजंगमस्तुलसीतरुः।
कवितामंजरी भाति रामभ्रमरभूषिता।।

तुलसी जयंती समारोह - 2025

परम्पूज्य स्वामी गोविंददेव गिरि जी को युगतुलसी पं. रामकिंकर उपाध्याय अलंकरण से सम्मानित करते हुए
प.पू. दीदी मंदाकिनी श्रीरामकिंकर, मुख्यमंत्री मा. श्री मोहन यादव, कार्याध्यक्ष तुलसी मानस प्रतिष्ठान श्री रघुनंदन शर्मा,
प्रमुख सचिव संस्कृति विभाग श्री शिवशेखर शुक्ला एवं श्री एन.पी. नामदेव

अपना उद्बोधन देते हुए मा. मुख्यमंत्री

परम्पूज्य स्वामी जी आर्शीवचन प्रदान करते हुए

सुधी श्रोताजन

मा. मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव को तुलसी मानस संग्रहालय के लिए रुपये 5 करोड़ की घोषणा के लिए धन्यवाद ज्ञापन देते हुए कार्याध्यक्ष श्री रघुनंदन शर्मा, संयोजक श्री राजेन्द्र शर्मा, सचिव श्री कैलाश जोशी, कोषाध्यक्ष श्री विजय अग्रवाल एवं श्री अरूण गुप्ता

पंचायत एवं समाज सेवा संचालनालय मध्यप्रदेश द्वारा समस्त पंचायतों एवं प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों के लिए, शिक्षा विभाग द्वारा समस्त महाविद्यालयों, उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों/हाई स्कूलों, शिक्षा महाविद्यालयों, बुनियादी प्रशिक्षण संस्थाओं, राज्य स्तरीय संस्थाओं तथा केन्द्रीय एवं जिला पुस्तकालयों के लिए, स्थानीय शासन विभाग द्वारा नगर निगमों एवं नगर पालिकाओं के लिए तथा आदिमजाति कल्याण विभाग द्वारा आदिवासी शालाओं के लिए स्वीकृत। उ.प्र. शासन द्वारा जिला पुस्तकालयों एवं वाचनालयों के लिए अनुमोदित।

तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश की मासिक मुखपत्रिका

तुलसी मानस भारती

संस्थापक

पं. गोरेलाल शुक्ल

http://webmail.manasbhawanbhopal.com/

संपादक मंडल

रघुनंदन शर्मा

प्रकाशक

कार्याध्यक्ष, तुलसी मानस प्रतिष्ठान, भोपाल

raghunandanbjp@gmail.com

प्रभुदयाल मिश्र

प्रधान संपादक

तुलसी मानस भारती

prabhu.d.mishra@gmail.com

राजेन्द्र शर्मा

संयोजक, तुलसी मानस प्रतिष्ठान, भोपाल

sharmarajendra8june@gmail.com

कैलाश जोशी

सचिव,तुलसी मानस प्रतिष्ठान, भोपाल

kailashjoshi58@gmail.com

देवेन्द्र कुमार रावत

संपादक

सहसचिव, तुलसी मानस प्रतिष्ठान, भोपाल

dkmrawat@gmail.com

परामर्श

विजयदत्त श्रीधर, रमेश शर्मा, माधव सिंह दांगी

ग्राहक शुल्क : वार्षिक रु. 250.00, पंचवर्षीय रु.1100.00, आजीवन रु. 2500.00 इस अंक का रु.20.00

विदेश में : फिजी आयरलैण्ड, मॉरीशस व अन्यत्र समुद्री डाक से (भारतीय रुपये में) वार्षिक रु. 1250.00, पंचवर्षीय रु. 5000.00 आजीवन रु. 12500.00, हवाई डाक से वार्षिक रु. 1500.00 पंचवर्षीय रु. 6000.00 आजीवन रु. 15000.00

पंजाब नेशनल बैंक खाता क्र. 1276000100137956 आईएफसी कोड PUNBO127600

सम्पर्क : तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश, मानस भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल–462002, दूरभाष : 0755–2661196, 2660010

tulsimanasbharati@gmail.com *www.manasbhawanbhopal.com*

अनुक्रमणिका

निर्वचन

राष्ट्र ऋषि और भाषा | प्रभुदयाल मिश्र | 03

आलेख

तुलसीदास जी की जीवनी | लोकनाथ द्विवेदी | 05

श्री गणेश जी द्वारा चंद्रमा को श्राप | शारदा मेहता | 13

रामचरितमानस में स्वणमृंग प्रसंग | रमेश शर्मा | 15

मानस में श्रीराम का विराट दर्शन | कैलाश चंद्र शर्मा | 18

क्षमा—एक आदर्श | डॉ. रंजना शर्मा | 21

कलियुग में मोक्ष प्राप्ति का सरल मार्ग भक्ति | सुभाष चंद्र | 23

प्रेम की मूर्ति : भरत | संदीप परिहार | 26

शिव स्तुति

द्वादश ज्योतिर्लिंग स्तुति | सीमाहरि शर्मा | 30

प्रतिष्ठान समाचार | 31

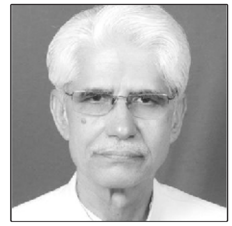

राष्ट्र ऋषि और भाषा

भारत की संस्कृति, शिक्षा और भाषाई एकता को सुदृढ़ करने में ऐसे ऋषियों और आध्यात्मिक गुरुओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, जिन्होंने परोक्ष या अपरोक्ष रूप से राष्ट्रीयता की भावना को संवर्धित किया। इनमें कुछ उल्लेखनीय नाम हैं– स्वामी विवेकानंद, महर्षि दयानंद सरस्वती, रवींद्र नाथ टैगोर, महात्मा गांधी, स्वामी रामतीर्थ, श्री अरविंद आदि। योगिराज अरविन्द ने अपने वेद विषयक ग्रंथ में तमिल और संस्कृत भाषा से संबद्धता का प्रामाणिक परिचय देते हुए कहा है – भाषाविदों ने भाषाई अंतरों के आधार पर भारतीय राष्ट्रीयता को उत्तर आर्य जाति और दक्षिण द्रविड़ में विभाजित किया है, लेकिन ध्यानपूर्वक अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि पूरे भारत में, कन्याकुमारी से अफगानिस्तान तक, एक ही रचना प्रकार है जिसमें भिन्नताएँ अत्यल्प हैं।' प्राचीन ऋषियों में महर्षि अगस्त्य ने संस्कृत भाषा के साथ–साथ द्रविड़ भाषाओं के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। तमिल साहित्य में उन्हें प्रथम संगम युग के शीर्ष के रूप में मान्यता प्राप्त है, और तमिल व्याकरण ग्रंथ 'अगस्त्यम्' उनसे जुड़ा हुआ जाना जाता है। महर्षि विश्वामित्र ने ऋग्वेद मण्डल 3 के मुख्य द्रष्टा ऋषि के रूप में ज्ञान की अधिष्ठात्री गायत्री मंत्र का साक्षात्कार किया। वे जब दक्षिण यात्रा से लौट रहे थे तब उन्होंने मार्ग में मिली सतलज और व्यास नदियों को नमित कर उनसे मार्ग प्राप्त किया और यह कामना की कि नदियों का जल सम्पूर्ण राष्ट्र में राष्ट्र रक्षक होने की भूमिका का निर्वाह करे –

रक्षाति ब्रह्मेदं भारतं जनम्

ऋग्वेद 3/53/12

मध्यकालीन आदि शंकराचार्य ने पूरे भारत में यात्रा करके चार प्रमुख मठों (श्रृंगेरी, द्वारका, पुरी और बद्रीनाथ) की स्थापना की। तमिलनाडु के श्रीपेरंबदूर में जन्मे श्री रामानुजाचार्य ने अद्वैत वेदांत के मायावादी दृष्टिकोण का खंडन करते हुए दक्षिण भारत में भक्ति आंदोलन को एक नई दिशा दी। उनके शिष्य हर वर्ग और पृष्ठभूमि से थे, जिससे सामाजिक समरसता बढ़ी। कर्नाटक में जन्मे मध्वाचार्य ने द्वैत सिद्धांत प्रस्तुत किया तथा निम्बकाचार्य ने द्वैताद्वैत सिद्धांत प्रतिपादित किया।

आंध्र के चंपारण्य में जन्मे श्री वल्लभाचार्य ने शुद्धाद्वैत सिद्धांत प्रस्तुत किया, जिसे 'पुष्टिमार्ग' के नाम से भी जाना जाता है। कश्मीर के अभिनवगुप्त ने शिव को परम तत्व माना। इस दर्शन ने विशेष रूप से कश्मीर, कर्नाटक, तमिलनाडु जैसे क्षेत्रों में अपनी गहरी जड़ें जमाईं और इन क्षेत्रों की सांस्कृतिक और भाषाई पहचान को आकार दिया। श्री रामानंद जी ने दक्षिण

भारत के भक्ति विचारों को उत्तर में प्रसारित किया। वे रामभक्ति शाखा के एक आद्याचार्य थे।

संत ज्ञानेश्वर महाराज ने 13वीं शताब्दी ई में मराठी भाषा में भगवद्गीता पर विस्तृत भाष्य 'ज्ञानेश्वरी' (भावार्थ दीपिका) लिखा। महाराष्ट्र के ही संत नामदेव जी जो वारकरी संत थे, बाद में पंजाब गए और सिख धर्म में गहरा प्रभाव छोड़ा। उनके कुछ पद गुरु ग्रंथ साहिब में भी संकलित हैं। कबीर दास ने साखी, सबद और रमैनी के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों, पाखंड और धार्मिक संकीर्णता का खंडन किया। संत रामानंद जी के शिष्य रविदास ने अपनी बानियों और दोहों के माध्यम से मानव समानता और आंतरिक शुद्धता पर जोर दिया। इस परंपरा में तुलसी, सूर और मीराबाई का स्मरण तो अविस्मरणीय है ही । गोस्वामी तुलसी दास द्वारा रामचरित मानस के आदि और अंत में निगम, आगम और पुराणों के सार संचय के रूप में हिन्दी में रची रामायण की भाषाबद्धता का संकल्प तो हमारा एक सार्वभौमिक प्रतिज्ञा कथन ही कहा जा सकता है ।

भाषानिबन्ध मति मंजुल मातनोति।

बालकाण्ड 1/7

भाषाबद्धमिदं चकार तुलसीदास तथा मानसम्

उत्तरकाण्ड

अतः विश्व की आदि और सर्वाधिक शब्द सम्पन्न संस्कृत से निष्पन्न तथा संवर्धित हिन्दी का देश के कुछ क्षेत्रों में सत्ता लोलुपों के विरोध के बीच 14 सितंबर को मध्य प्रदेश में 'मातृ भाषा संकल्प' दिवस के रूप में समादृत करने के अवसर पर राष्ट्र ऋषियों की इस महान विरासत को उक्तानुसार स्मरण किया जाना सर्वथा स्वागतेय हो जाता है ।

प्रभुदयाल मिश्र
प्रधान संपादक
8839319901

अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वयदक्षरम् ।
विवतति अर्थभावेन प्रक्रिया जगतोयतः।।

भर्तृहरि, वाक्यपदीयम्

अर्थात् शब्द रूपी ब्रह्म अनादि, विनाश रहित और अक्षर (नष्ट न होने वाला) है तथा उसकी विवर्त प्रक्रिया से ही यह जगत भासित होता है।

वहिर्साक्ष्य के आधार पर तुलसीदास जी की जीवनी

पुण्यश्लोक लोकनाथ द्विवेदी 'सिलहकारी'

तुलसीदास जी की जीवनी पर प्रकाश डालने वाले सर्वप्रथम प्रमाणिक लेखक प्रियादास जी हैं। उन्होंने अपने गुरु नाभादास जी की आज्ञा से उनके भक्तमाल पर भक्त सुबोधनी विस्तृत टीका लिखी जिसके छप्पय छंद में उनके संक्षिप्त चरित्र को तत्कालीन समाज में प्रसिद्ध जनश्रुतियों के आधार पर स्वतंत्र विस्तार दिया गया। इसके विषय में रचना काल ओर उसका निर्माण का हेतु बताते हुए स्वयं प्रियादास जी ने लिखा है –

नाभादास की अभिलाष पूरन लै कियो मैं तो

इससे स्पष्ट है कि यह रचना नाभादास जी की आज्ञा से हुई थी और उसकी पूर्ति संवत् 1769 विक्रम फाल्गुन मास कृष्णपक्ष की सप्तमी के दिन हुई थी ।

इसमें गोस्वामी तुलसीदास जी की जीवनी पर एकादश छन्द कविताबद्ध कहे गए जो क्रमांक 500 से लेकर 510 तक हैं। इन्हीं के आधार पर पिछले लेखों में तुलसी की जिंदगी पर विस्तार से लिखा गया है। अतएव इनको उद्धृत करना आवश्यक और उचित प्रतीत होता है ।

नाभादास जी की अभिलाष पूरन लिखी मैं तो
ताकी साखी प्रथम सुनाई नीके गाइके
संवत प्रसिद्ध दस सात सत्त उनहत्तर
फाल्गुन मास वदी सप्तमी विताई के।

इससे स्पष्ट है कि यह रचना नाभादास जी आज्ञासे हुई थी और इसकी पूर्ति संवत 1769 विक्रमी फाल्गुन मास कृष्णपक्ष सप्तमी के दिन हुई थी।

इसमें गोस्वामी तुलसीदास जी की जीवनी पर एकादश कवित्त कहे गए हैं जो छंद संख्या 500 से लेकर 510 छंद संख्या तक है। इन्हीं के आधार पर पिछले लेखकों ने तुलसी की जीवनी पर विस्तार से लिखा है ।

प्रिया दास जी के उक्त वर्णन से हमें तुलसीदासजी की जीवनी की निम्नलिखित बातों का पता चलता है – 1. तुलसीदास अपनी पत्नी पर अत्यंत आसक्त थे। उसके एक बार नैहर जाने पर आप भी रात को नदी पार कर पहुँचे और दरवाजे पर आवाज दी। पत्नी ने लज्जित हो तुलसीदास से कहा–हाड़ मांस की नारी देह पर जो अनुरक्ति है वह राम पर हो तो मुक्ति मिल जाए। इस पर तुलसी को वैराग्य हो गया और वे भक्ति साधना के हेतु काशी चले गए।

जब तुलसीदास अपनी पत्नी के निकट भयावनी रात में गंगा की धार पार कर पहुँचे तब उसने उन्हें देखते ही कहा–

लाज ना लागत आपको दौरे आए साथ
धिक् धिक् ऐसे प्रेम को कहा कहों मैं नाथ ।
अस्थि चर्ममय देह मम् तामें ऐसी प्रीति
होती जो श्रीराम में होति न तो भव-भीत ।

घर छोड़ने के बाद भी एक बार पत्नी ने कटाक्ष करते हुए निम्नलिखित दोहा लिख भेजा था–

कटि की खीनी कनक सी
रहति सखिन संग सोय।
मोहि कटे को डर नहीं
धनत कटे डर होय ।

उत्तर में तुलसीदास जी ने निम्नलिखित दोहा भेजा था–

कटे एक रघुनाथ संग बाँधि जटा सिर केस
हम तो चाखा रामरस पत्नी के उपदेश ।

इस घटना का समर्थन स्वयं तुलसीदास जी के कथन से होता है जिसका उल्लेख उनके आत्मचरित में हो चुका है । इसके सिवाए प्रायः सभी लेखकों ने इसका समर्थन किया है।

उनके नित्य प्रति जल दान से प्रेत ने संतुष्ट होकर उन्हें श्री हनुमान जी का पता बतलाया था जो एक रोगी दरिद्री ब्राह्मण के वेश में नित्यप्रति रामायण सुनने उपस्थित होते थे। उन्होंने हनुमान जी से प्रार्थना की और उनके प्रसन्न होने पर उनसे राम दर्शन कराने का वरदान मांगा। हनुमान जी ने उन्हें चित्रकूट में जाकर राम दर्शन करने की बात कही। वहाँ पहुँच तुलसीदास ने धनुष बाण लेकर आते श्रीराम और लक्ष्मण के दर्शन किए पर पहचानने में भूल होने से उन्हें शिकारी राजकुमार समझ मुँह फेर लिया। हनुमान जी के द्वारा उनसे दर्शन होने की बात पूछने पर जब उन्हें पता लगा तो वे अपनी भूल पर बहुत पछताए।

इस घटना के संबंध में तुलसीदास का निम्नलिखित पद प्रसिद्ध है जिसमें उन्होंने उस अवसर पर श्रीराम लक्ष्मण को न पहचान पाने की भूल से दर्शनों का आनंद न ले सकने का दुख व्यक्त किया है–

लोचन रहे बैरी होय
जान बूझ अकाज कीन्हों गयो मैं भूल
अविगत जु तेरी गति न जानी रह्यो जागत सोए
सबै छबि की अवधि मेरे निकासि गो ढिग होय
करम हीन हों पाय हीरा दियो पल में खोय
दास तुलसी राम बिछुरे कहो वैसी होए।

इस समय वेदना से व्याकुल तुलसीदास को हनुमान जी ने कृपाकर सांत्वना दी और पुनः राम दर्शन होने का संकेत दिया। इस बार प्रातःकाल तुलसीदास रामघाट पर जा विराजे। उसी समय एक सुंदर पुरुष ने उनके निकट आकर कहा– बाबा चंदन दो। तुलसीदास चंदन घिसने लगे। इसी समय श्री मारुति जी ने शुक रूप धारण कर निम्न दोहा कहा जिसमे श्री राम की उपस्थिति का तुलसीदास को संकेत किया गया है–

चित्रकूट के घाट पर भई संतन की भीर

तुलसीदास चंदन घिसे तिलक देत रघुवीर।

तुलसीदास अपल एक दृष्टि से श्री राम की छवि देख मग्न हो गए। उन्हें सुधबुध ना रही। तब श्री राम अपने हाथ से तिलक लगा कर अंतर्धान हो गए ।

चित्रकूट में राम दर्शन की उक्त घटना का उल्लेख विनय पत्रिका के निम्नलिखित पद्यांश में भी है–

तुलसी तो को कृपालु जो कियो कोसल पालु
चित्रकूट को चरित्र भेजें चेतु चित्त करि सो
(विनय पत्रिका)

गोस्वामी तुलसीदास जी को मृगया–विहारी राम का दर्शन हुआ था और उस समय की मनोहर मूर्ति उनके चित्र पटल पर सदा के लिए अंकित हो गयी थी। इसी से उन्होंने रामचरित मानस में स्वयं कहा है–

सरगु नरक अपबरग समाना
जहं तहं देख धरे धनु बाना
करम वचन मन राउर चेरा
राम करहु तेहि के उर डेरा ।

इसी की झलक उनके निम्नलिखित गीत में भी है–

सुभग सरासन सायक जोरे
खेलत राम फिरत मृगया वन
वसति सो मृदु मूरति मन मोरे
ललित कंध कर भुज विसाल
उर लेहिं कंठ रेखे चित चोरे
अवलोकत मुख देत परम सुख
लेत सरद शशि की छवि छोरे
जटा मुकुट सिर सारस नयननि
सोहें तकत सु भोंहे सकोरे
सोभा अमित समात न कानन
उमगि चली चहुँ दिसि मिति फोरे
368 गीतवाली सं 2

एक स्थल पर और भी कहा है –

सोहत मधुर मनोहर मूरति
हेम- हरिन के पाछें
धावनि नवनि विलोकनि
बिथकनि बसे तुलसि उर आछे।
गीतावली 369 गीत संख्या 3

मम पाछे धर धावत
धरे सरासन बान
फिरि फिरि प्रभुहि बिलोकिहों
धन्य न मोसम आन।

कवितावली में मृगया बिहारी श्रीराम की शोभा वर्णन करते हुए लिखा है–

लोचन लोल चलें भृकुटी बल
काम कमानहु सो तृन तोरे
राजत राम कुरंग के संग निसंग
कसे धनु सों सर जोंरे
सर चारिक चारु बनाह कसे
कटि पानि सरासन सायक ले
बन खेलत राम फिरे मृगया
तुलसी छवि सो बरने किमि है
अवलोकि अलौकिक रूप मृगी
मृग चौंक चके चितवे चित दे
न डगे न भगें जिय जानि
सिलीमुख पञ्च धरे रति नायक हैं।
(कवितावली 170)

बरवें रामायण मैं भी मृगया बिहारी श्रीराम की शोभा के विषय में लिखा है–

जटा मुकुट कर सर धनु संग मरीच
चितवनि वसति कनखियनु अखियन बीच
(बरवै रामायण 21 छंद 30)

वनारस में एक हत्यारा राम नाम लेता हुआ आत्मग्लानि से भरा सब पर अपना पाप प्रकट करता भीख माँगता था। वह एक दिन दुखी हो असी घाट पर गोस्वामी तुलसीदास के आश्रम में पहुंचा और राम नाम पर भिक्षा मांगी। तुलसीदास ने उसके हार्दिक पश्चाताप पर शुद्ध भाव से रामभक्ति के द्वारा उसको पवित्र हुआ देख उसे साथ बैठाकर भगवान का भोग लगाया। पंडितों ने व्यवस्था के प्रतिकूल हत्यारे के साथ भोजन करने पर तुलसी दास जी से प्रश्न किया कि प्रायश्चित विधि को पूर्ण न करने वाले हत्यारे को ऐसे समय साथ रखना क्या अधार्मिक कृत्य नहीं है ? इसे आपने शुद्ध कैसे मान लिया? गोस्वामी तुलसी दास ने विनम्रता से उत्तर दिया कि राम नाम का प्रभाव ही ऐसा है जिससे पतित पावन हो जाते हैं। पंडितों ने राम नाम महात्म्य को स्वीकार करते हुए भी उस हत्यारे के पवित्र होने के प्रत्यक्ष प्रमाण मांगे तो तुलसी दास ने सरल भाव से उनसे मनचाही परीक्षा लेने की बात कही। इस पर पंडितों ने यह शर्त रखी की यदि शिवजी का नंदी उस हत्यारे के हाथ से प्रसाद खाले तो हत्यारा पावन या शुद्ध हुआ माना जा सकता है। दर्शकों और परीक्षकों के आश्चर्य का उस समय कुल पार न था जब उन्होंने शिव जी के नादिए को उस हत्यारे के हाथ से प्रसाद लेते स्वयं देखा। अब तुलसीदास भक्त और ज्ञानी के साथ सिद्ध माने जाने लगे।

एक बार कुछ चोर अर्धरात्रि के समय जब तुलसीदास गहरी नींद में सो रहे थे उनकी कुटिया में घुसकर चोरी करना चाहते थे। किंतु चोरों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उन्होंने बार बार प्रयत्न करने पर भी प्रत्येक द्वार पर सावली सूरत के धनुर्धारी को सजग भाव से रक्षा करते और पहरा देते देखा। प्रातःकाल वे गोस्वामी तुलसीदास के पास पहुंचे और उस सांवले धनुर्धर प्रहरी के विषय में प्रश्न किया। गोस्वामी तुलसी दास ने सुनते ही श्रीराम की अपूर्व कृपा पर सजल लोचनों से कहा– भाई तुम धन्य हो जो तुम श्री राम के दर्शन कर सके। मैं तो ऐसा अभागा हूँ कि अपने प्रभु को पहरा देने का कष्ट दे रहा हूँ। वे चोर भी अपनी करनी पर लज्जित हो पश्चाताप करते हुए भगवान राम का भजन कर सदाचार से रहने लगे।

डॉक्टर ग्रियर्सन ने चोरों के संबंध में एक और चमत्कारी कथा लिखी है। वे कहते हैं कि एक बार काशी में कही से डेरे पर लौटते हुए गोस्वामी तुलसीदास जी को रात हो गई। अंधेरी रात में चोरों ने उन्हें घेरा। गोसाई जी ने जंगल में हनुमान जी का स्मरण कर यह दोहा कहा–

वासर ढासनि के ढका रजनी चहुं दिसि चोर
चलत दयानिधि देखिए कपि केसरी किसोर।

(गोस्वामी तुलसीदास पृष्ट 123)

इसके साथ ही हनुमान जी प्रकट हो गए और चोर भागते नजर आए।

किसी युवा ब्राह्मण के मरने पर उसकी विधवा पत्नी सती होने जा रही थी। अकस्मात तुलसीदास उसी मार्ग से निकले। उसने विनम्रता से सिर झुका हाथ जोड़ तुलसीदास जी को प्रणाम किया। तुलसीदास जी ने सहज भाव से उसे सुखसौभाग्य संपन्न रहने का आशीर्वाद दिया। जब उसने अपने वैधव्य की बात बताई और बाबा तुलसीदास से निहोरा किया तब उन्होंने कहा अब क्या है मुख से वाणी निकल चुकी है। तुम इसे रामकृपा समझो। इतना कहकर उस मृतक के कुटुम्बियों से सदाचार से रह कर रामभक्ति करने का प्रण लेकर तुलसीदास जी ने राम से प्रार्थना

की। तब वही मृतक फिर से जी उठा। विधवा पति के पुनर्जीवन से सुखी सधवा के रूप में घर लौटी। श्रीराम की भक्ति की महिमा के साथ ही तुलसीदास के सिद्ध महात्मा होने की ख्याति बड़ी।

दिल्ली सम्राट ने तुलसीदासजी की ख्याति सुनकर अहदी भेज कर उन्हें सादर दिल्ली बुलाया। अहदी ने सम्राट का निमंत्रण देते हुए प्रार्थना की कि बादशाह आपके द्वारा मृत ब्राह्मण के पुनर्जीवन की कथा सुनकर आपके दर्शन के अत्यंत उत्सुक हैं। तुलसीदास जी उसके साथ दिल्ली पहुंचे। वहाँ सम्राट ने उन्हें सादर आसन दे सम्मान प्रदर्शित करते हुए उनसे कोई करामात, कोई सिद्धि दिखाने का विशेष हठ किया। तुलसीदास जी ने गंभीरता से कहा कि सब राम का किया होता है। उनकी भक्ति सब सार है। करामात आदि दिखाना तुलसीदास को रुचिकर ना था। वे तो शील सदाचार और सत्य के द्वारा प्रेम मूर्ति व्यापक परमात्मा श्रीराम की भक्ति को लोकसेवा में परिणित करने का आदर्श सिखला रहे थे। अंत में क्रुद्ध हो सम्राट ने उन्हें बंदी खाने में कैद कर दिया।

उस समय दुखपूर्ण हृदय से गोस्वामी तुलसीदास जी ने फिर हनुमान जी से प्रार्थना की। इस पर बंदरों की एक बड़ी सेना ने शाही दुर्ग पर धावा किया और सम्राट के हरम तथा दरबार के सभी लोगों की खूब दुर्गति कर डाली। घबराकर बादशाह तुलसीदास जी के शरणापन्न हुआ। इस समय सरल हृदय तुलसीदास जी ने दयार्द्र हो पुनः मारुति से कपियों को शांत कर अपने बल से उन्हें कष्ट देने के हेतु क्षमा याचना करने की प्रार्थना की।

इस घटना की पुष्टि अन्य साक्षियों से भी होती है। तुलसीदासजी की विनय पत्रिका के पदों में इसका स्पष्ट उल्लेख मिलता है। बंदी होने पर तुलसीदास जी ने श्री हनुमान जी से प्रार्थना करते हुए कहा—

तोहि ना ऐसी बूझिये हनुमान हठीले
सेवक सीता राम के तुमसे ना बसीले
तेरे देखत सिंह के सुत मेढक लीले
जानत हूँ कलि तेरिउ मनी गुनगन कीले
हांक सुनत दसकंध के भय बंधन ढीले
सो बल गयो कि भए अब कछु गर्व गहीले
सेवक को पर्दा फटे तू समरत्थ सीले
अधिक आपु ते आपु मैं सन्मान सहीले
सांसति तुलसीदास की देखि सुजसतुही ले
तिहू काल तिन को भलो जो राम रंगीले ।

(विनय पत्रिका)

फिर सम्राट के शरणापन्न होने पर उन्होंने उपद्रव शांति हेतु निम्न प्रार्थना की —

अति आरत अति स्वार्थी अति दीन दुखारी
इनकी विलगु न मानिये बोलहिं न बिचारी
लोक रीति देखी सुनी व्याकुल नर नारी
अति बरसे धन बरसै देहि देवहिं गारी
ना कहि धाए नाथ सो भई सासति भारी
कड़ी आए कीवी क्षमा निज ओर निहारी।
समय सांकरो सुमरिये समरथ हितकारी
सो सब सवधि दया करे अपराध बिसारी
बिगरी सेवक की सदा साहिब है सुधारी
तुलसी पै तेरी कृपा निरुपाधि निहारी ।

(विनय पत्रिका)

कवितावाली के निम्नलिखित छंद से भी उक्त प्रकार से बंदी बनना विदित होता है—

कानन भूधर बारि बयारि दबा
बिस ज्वाल महा अरि घेरे,

संकट कोटि परो तुलसी तहं
मातु पिता सुत बंधु न मेरे,
राखि है राम कृपा करि के
हनुमान से पालक हैं जिनकेरे
नाक रसातल भूतल में
रघुनायक एक सहायक मेरे ।

(कवितावली)

इस घटना में दिल्लीश्वर सम्राट का नाम नहीं दिया गया है। श्रीयुत एफ एस ग्राउस ने अपने ग्रंथ में 'रामायण ऑफ तुलसी दास' में प्रोफेसर विल्सन का मत उद्धृत करते हुए लिखा है– सर विल्सन अपने बहुमूल्य और आकर्षक निबंध 'ऐसे ऑन रीलिजस सेक्ट ऑफ हिंदूज' मैं तुलसी दास के विषय में निम्नलिखित सूचना देते हैं जिसे वे भक्तमाल से प्राप्त हुई कहते हैं–

अपनी जिस पत्नी पर तुलसीदास अत्यंत आसक्त थे उसी के द्वारा भर्त्सना किए जाने पर उनमें रामभक्ति की विशेष अंतर्प्रेरणा हुई और उन्होंने वैराग्य ले पहले बनारस की यात्रा की और फिर वे चित्रकूट गए जहाँ उन्हें हनुमान जीके प्रत्यक्ष दर्शन हुए जिनसे उन्हें राम काव्य रचने की प्रेरणा प्राप्त हुई और उनमें चमत्कार, सिद्धि की शक्ति जागृत हुई। उनकी ख्याति दिल्ली तक पहुंची। वहाँ उस समय शाहजहाँ सम्राट था । वादशाह ने उन्हें बुलाया और श्रीराम के प्रत्यक्ष दर्शन कराने का हठ किया। तुलसीदास ने जब बादशाह का कहा न माना तब उसने उन्हें कैदखाने में डलवा दिया। आसपास रहने वाले लोगों ने उन्हें बंधन मुक्त करने की तुरंत ही प्रार्थनाएँ की क्योंकि वे अपनी खुद की रक्षा के हेतु चिंतित हो रहे थे। बंदी खाने में झुंड के झुंड वानर आ पहुँचे और वे कैदखाने के साथ ही उसके निकटस्थ भवनों को भी गिरने और नष्ट करने लगे। शाहजहाँ ने तुरंत कवि तुलसीदास को बंधनमुक्त कर उन्हें सताने पर क्षमा याचना करते हुए उनकी कृपा चाही। इस पर तुलसीदास ने सम्राट को पुरानी दिल्ली को जो उस दिन से राम का स्थान हो गई थी, से चले जाने की बात कही और उसे मानकर शाहजहाँ ने पुरानी दिल्ली त्याग नई दिल्ली बसाई जो उसके नाम पर शाहजहांनाबाद कही जाने लगी। इसके पश्चात् तुलसीदास वृंदावन गए।

इसमें शाहजहाँ का नाम दिया गया है जो प्रिया दास और नाभाजी की भक्तमाल की तरह उसकी टीका मूल में कहीं भी नहीं है। इस पर अधिक कुछ लिखना व्यर्थ है क्योंकि शाहजहाँ बादशाह तुलसीदास के मृत्यु के पूरे पांच वर्ष पीछे गद्दी पर बैठा था। अतएव गोस्वामी तुलसीदास जी को सम्राट शाहजहाँ के पिता बादशाह जहांगीर के द्वारा बंदी बनाने की बात होना ही संभव है। उन्हीं के बुढ़ापे में मृत्यु के पांच वर्ष पूर्व दिल्ली के पुराने किले में बंदरों के डेरा डालने और तहस नहस किए जाने की घटना घटी थी जिसपर उनके बाद ही सम्राट शाहजहाँ ने दिल्ली का नया किला बनवाया था। इस घटना में अपनी छिपी पराजय की अनुभूति ने इसका उल्लेख जहांगीर के आत्म चरित 'तुजुके जहांगीरी' या जहांगीरनामा मैं नहीं करने दिया। संत को सताने और अपने फजीते के इस किस्से को जहांगीर स्वयं अपनी कलम से लिखने में झिझके तो इसमे आश्चर्य है क्या ?

इस घटना के विषय में डॉ श्यामसुंदर दास और डॉ पीतांबर दत्त ने विचार करते हुए लिखा है– ऐतिहासिक दृष्टि से भी यह बात असंभव नहीं क्योंकि गुसाई जी बहुत समय तक जहांगीर के समसामयिक रहे। जहांगीर नामा में इस बात का

उल्लेख क्यों नहीं मिलता कदाचित जहाँगीर इसे अपने लिए कलंक की बात समझता था कि मैंने व्यर्थ ही एक साधु को सताया इससे उसको अपने ग्रंथ में उल्लेख ना होने दिया हो। (पृष्ठ 139)

स्वयं तुलसीदास हनुमान जी को 'बंदीछोड़' कहते हैं तब उनकी कैद होने और हनुमान जी द्वारा छुड़ाए जाने की कथा सत्य ही है वे लिखते हैं

बंदी छोर विरुदावली निगमागम गाई
नीकी तुलसीदास की तोरि, न निकाई ।

(विनय पत्रिका)

काशी से गोस्वामी तुलसीदास जी नाभा दास जी से मिलने वृंदावन पधारे थे। इसका उल्लेख नाभादास से उनके परिचय के साथ किया जा चुका है । इस समय नाभादास जी के साथ वे व्रज भूमि के देवस्थानों में दर्शनों को गए थे। इस समय मदन गोपाल जी के दर्शनों के काल उन्होंने मदन गोपाल श्रीकृष्ण से अपने इष्टदेव श्री राम के रूप में अपने दर्शन देने की प्रार्थना की और उसी समय सबके देखते देखते श्री कृष्णमूर्ति में श्रीराम मूर्ति के दर्शन हुए। इस समय भक्त तुलसी दास ने प्रसन्न हो विनयावनत कहा–

मुरली मुकुट दुराय के धर्यो धनुष सर हाथ
तुलसी लखि रुचि दास की नाथ भए रघुनाथ ।

दो सौ वैशणवन की वार्ता मैं श्री गोकुलनाथ गोसाईं ने इस घटना का उल्लेख नन्ददास की वार्ता में इस प्रकार किया है–

जब नन्ददास जे श्रीनाथजी के दर्शन करिवे कू गए तब तुलसीदास हूँ उनके पीछे–पीछे गए। जब श्री गोवर्धनाथ जी के दर्शन करे तब तुलसी दास जी ने माथो नवायो नहीं। तब नन्द जी जान गए ये श्री रामचन्द्रजी बिना और दूसरे कु नहीं नमें हैं। तब नन्ददास जी ने मन में विचार की यों 'यहाँ श्री गोकुल में इन कूं' श्री रामचन्द्रजी के दर्शन कराऊं। तब ये श्री कृष्ण को प्रभाव जानेंगे। तब नन्ददास जी ने गोवर्धननाथ जी सों विनती करी–

कहा कहूं छवि आपकी भले विराजे नाथ
तुलसी मस्तक तब नवे धनुष वान लो हाथ ।

ये बात सुनके श्रीनाथजी को श्री गोसाँई जी की कांन पे विचार भयो। जो श्री गोसाई जीके सेवक कहे सो हमको मानो चाहिए। जब श्री गोवर्धननाथ जी श्री रामचन्द्रजी को रूप धरके है तुलसी दास जी को दर्शन दिए तब तुलसीदास जी ने श्री गोवर्धन दास नाथ कों साष्टांग प्रणाम करी। इसमें श्री कृष्ण मूर्ति के श्री राम मूर्ति में दर्शन देने का हेतु पुष्टिमार्गी नंददास को कहा है (अष्ट छाप पृष्ठ 102)

इस घटना पर लोगों को आश्चर्य प्रकट करते देख तुलसीदास जी भक्ति की दृढ़ता के बल तथा भगवान की भक्त वत्सलता की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कहा–

प्रभु सत्य करी प्रह्लाद गिरा
प्रगटे नर केहरि खंभ महाँ
झषराज ग्रस्यो गजराज कृपा
तत्काल विलंब कियो न तहाँ
सुर साखी दैराखी है पाण्डु बधू
पट लूटत कोटिन भूप जहाँ
तुलसी भज सोच विमोचन को
जन को पन राखो न राम कहाँ।

इस प्रसिद्ध घटना का उल्लेख करते हुए महाराष्ट्र के कवि मोरोपंत लिखते हैं–

श्री कृष्ण मूर्ति जेणे केली श्री राममूर्ति सज्जन ही राम–सुत मयूर म्हणे त्याचा सूयशी नित्तान्त सज्जन हो

(तुलसी स्तव)

इस समय जब कुछ लोगों ने श्रीकृष्ण को 16

कला से पूर्ण भगवान का अवतार कहा और श्रीराम को 12 कलाओं से युक्त अंश अवतार कहा। तब तुलसीदास जी ने विनम्रता से कहा कि मैं तो अब तक दशरथ नंदन, आदर्श शील संपन्न अति सुन्दर मानकर ही श्री राम का अनन्य भक्त था। आज उन्हें ईश्वर अवतार आप से सुन कर मेरी भक्ति उनमें सौ गुनी बढ़ गई है।

प्रियादास जी के पीछे फिर अनेक भक्त मालाएँ प्रस्तुत होती रही जिनमें नाभादास जी के मूल की प्रिया दास की विस्तृत टीका में उल्लेखित भक्त विषयक वार्ता को अपनाया गया। हम उन सब में इनकी दी गई बातें को अवश्य पाते हैं। तुलसी दास जी के सभी जीवन चरित लेखकों ने प्रिया दास के छंद उद्धृत किए हैं। इस स्थान में हम उन पर विचार भी कर सके हैं। हम भक्तमाल पर प्रिया दास की टीका के आधार पर चलनेवाले राजा प्रताप सिंह और उनके भक्ति कल्पद्रुम महाराज रघुराज सिंह की रामरसिकावली, भक्तमाल बाबा बेनी माधव दास के मूल गोसाईं चरित आदि सभी में उक्त सात घटनाओं को कुछ परिवर्तित और परिवर्धित रूप में पाते हैं। टीका कारों ने भूमिका में तुलसी चरित्र में उनका उल्लेख अनिवार्य रूप से किया है।

इन्हीं के आधार पर राजा प्रताप सिंह ने अपने कल्पद्रुम में, रीवा नरेश महाराष्ट्र विश्वनाथ सिंह ने अपने भक्तमाल में और महाराज रघुराज सिंह अपनी रामरसिकावली में तुलसीदास का चरित्र अंकित किया है।

सौजन्य : हरिविष्णु अवस्थी, अध्यक्ष श्री वीरेंद्र केशव साहित्य परिषद,
किले का मैदान टीकमगढ़

सहसां विदधीतक्रियामाविवेकः परमापदां पदम्
वृहत् हि विमृश्यकरिणां गुणंलब्धाःस्वमेव संपदः।

महाकवि भारवि
(छठी सातवीं शताब्दी)

आवेश में आ कर बिना सोचे समझे कोई काम न करना चाहिए। अविवेक को भयावह विपत्तियों का घर समझना चाहिए। जो व्यक्ति सोच समझकर कार्य करता है उसके गुण लक्ष्मी को प्रसन्न कर देते हैं वह उस व्यक्ति को ही धन धान्य को चुन लेती है ।

डॉ. नरेंद्र शर्मा कुसुम

शारदा मेहता

श्री गणेश जी द्वारा चन्द्रमा को श्राप

गणेश पुराण के अनुसार एक समय की बात है कि पितामह ब्रह्माजी कैलास पर्वत पर श्री शिवजी के समीप आकर बैठे। वे दोनों चर्चारत थे। ऐसे समय वहाँ पर देवर्षि नारदजी का भी आगमन हुआ। देवर्षि नारदजी एक फल लेकर आये थे। फल बड़ा सुन्दर, आकर्षक और स्वादिष्ट था। नारदजी ने वह फल भगवान शिव के हाथों में समर्पित कर दिया। दोनों बालक श्रीगणेशजी और कार्तिकेयजी फल के प्रति आकर्षित हो गए और उन दोनों ने फल को प्राप्त करने की उत्सुकता व्यक्त की। शिवजी के सम्मुख यह समस्या थी कि दोनों बालकों के मध्य फल को कैसे वितरित किया जाए। शिवजी ने ब्रह्माजी से पूछा कि आप ही इस समस्या को सुलझाएँ। ब्रह्माजी ने कहा कि इनमें से जो छोटे हैं उन्हें ये फल प्रदान किया जाए। अतः फल षड़ानन को दे दिया गया। इस निर्णय से श्रीगणेश जी कुपित हो गए।

ब्रह्माजी अपने सदन पहुँचे तो वहाँ उन्होंने सृष्टि रचना का कार्य प्रारंभ किया। कुपित गजानन ने उनके कार्य में बाधा उपस्थित कर दी। उन्होंने उग्र रूप धारण किया और विधाता के सम्मुख उपस्थित हो गए। जब चन्द्रमा ने अपने गणों सहित गजानन का उग्र रूप और ब्रह्माजी का भयभीत स्वरूप देखा तो उन्हें हँसी आ गई। गणेशजी ने चन्द्रमा का हँसने वाला स्वरूप देखा तो उन्होंने चन्द्रमा को शाप दे दिया, चन्द्र तुम अब किसे के देखने लायक नहीं रहोगे। यदि तुम्हें किसी ने देख लिया तो वह पाप का भागी होगा–

अदर्शनीय स्त्रैलोक्ये पद्वाक्यात्त्वं भविष्यसि।
कदाचित्केन दृष्टा स महापातकवान् भवेत।।

(गणेश पुराण 1/61/7–8)

गणेशजी तो ऐसा कहकर वहाँ से चले गए परन्तु श्रीहत् चन्द्रमा को अपने किए गए उपहास पर पश्चाताप होने लगा। अब वह सोलह कलाओं से युक्त श्रीहीन, मलिन और दुःखी हो गया। ऐसा कौन सा उपाय करूँ जिससे मैं पुनः पूर्व के समान

सुन्दर और जगत् वंद्य हो जाऊँ और सभी देवता को सुख पहुँचा सकूँ।

चन्द्रमा की मलिन दशा से दुःखी देवतागण भी गजानन के पास पहुँचे। सभी ने गणेश वन्दना की और उन्हें प्रसन्न करने के उपाय किया। इन्द्र आदि सभी देवताओं की स्तुति से श्रीगणेशजी प्रसन्न हुए। उन्होंने देवताओं से कहा कि आप वर माँगें। गजानन की वाणी सुनकर सभी देवतागण प्रसन्न हो गए। उन्होंने गजानन को दण्डवत् प्रणाम किया। गजानन ने कहा कि मेरा वचन अटल है। यह कभी असत्य नहीं हो सकता है। फिर भी में इतना कर सकता हूँ–

भाद्रशुक्ल चतुर्थ्यां यो ज्ञानतोऽज्ञानतोऽपि वा।
अभिशापी भवेच्चन्द्र दर्शनाद मृशदुःखभाग।।

(गणेश पुराण 1/61/25–26)

अर्थात् भाव यह है कि जो जानकर या अनजाने में ही भाद्र शुक्ल चतुर्थी को चन्द्र का दर्शन करेगा, वह अभिशप्त होगा। उसे अधिक दुरूख उठाना पड़ेगा। गणेशजी की बातें सुनकर देवतागणों के मध्य हर्ष छा गया। उन्होंने गजानन के चरण वंदन किए और चन्द्रमा के पास पहुँचे।

देवताओं ने चन्द्रमा से कहा कि गणेशजी ने तुम्हारे शाप को सीमित कर दिया है। अब तुम स्वयं जाकर गणेशजी की शरण लो और यश प्राप्त करो। ऐसा समझ देवतागण वहाँ से चले गए। चन्द्रमा प्रसन्नचित्त होकर गणेशजी के पास गए और बारह वर्ष तक एकाक्षरी मंत्र का जाप किया (गं, ग्लौ एवं गौं– यह एकाक्षरी मंत्र है– गणेश पुराण) इससे श्रीगणेशजी प्रसन्न हुए। चन्द्रमा ने गणेशजी के महान स्वरूप को देखा तो वे भय से काँपने लगे। उन्होंने गणेशजी की स्तुति की और कहा–

अज्ञानदोषेण कृतोऽपराधस्तं
क्षन्तुमर्होऽसि दयाकरं त्वम्।
तवापि दोषरू शरणागतस्य
त्यागे महात्मन् कुरु मेऽनुकम्पाम्।।

(गणेश पुराण 1/61/44)

भावार्थ यह है कि मैंने अज्ञान दोष के कारण अपने प्रति अपराध किया है। आप मुझे क्षमा करें। मैं आपका शरणागत हूँ। आप मुझ शरणागत का त्याग न करें। मुझ पर कृपा करें। चन्द्रमा के स्तवन करने, गद्‌गद् कंठ से प्रार्थना करने और दंडवत प्रणाम करने से श्रीगणेशजी प्रसन्न हो गए। उन्होंने चन्द्रमा को पूर्व जैसा सुन्दर स्वरूप प्रदान कर दिया और साथ ही उन्हें सावधान किया कि भाद्रपद शुक्ल पक्ष की चतुर्थी जो तुम्हें देख लेगा, वह अभिशाप का भागी होगा। इस दिन तुम अदर्शनीय रहोगे। जो भक्त तुम्हारा दर्शन करेगा वह पाप का भागी होगा। तुम एक अंश से मेरे ललाट पर स्थित रहोगे। इस प्रकार गणेशजी ने वरदान दिया जिससे चन्द्रमा जगत् में वंदनीय हो गए। उनका स्वरूप सुन्दर हो गया।

वर्तमान में भी भाद्रपद शुक्ल की चतुर्थी को चन्द्र दर्शन नहीं किया जाता है। यह कहानी युवा पीढ़ी को इस बात का संकेत करती है कि कभी भी अपने पूज्य व्यक्ति के कथन को हल्के में न लें। उसकी मजाक न उड़ाएँ। ऐसा करने पर चन्द्रमा के समान दंड का भागी होना पड़ेगा। अतः पूज्य व्यक्तियों के मध्य सावधान होकर चर्चा करें।

सीनि. एमआईजी–103, व्यास नगर, ऋषिनगर विस्तार, उज्जैन (म.प्र.)
मो. 940666280

रमेश शर्मा

रामचरितमानस में स्वर्णमृग प्रसंग

रामचरित मानस में वर्णित स्वर्णमृग प्रसंग कोई मनोरंजन की लीला नहीं है। इस प्रसंग में रामजी और माता सीता ने कलियुग की उन बहन बेटियों को बहुरूपियों से सावधान किया है जो अपना नाम और पहचान बदलकर मोहक जाल फेंकते हैं और जब लड़कियाँ मोहित हो जातीं हैं तब उन पर विवाह और मतान्तरण का वैसा ही दबाव बनाते हैं जैसा रावण ने लंका ले जाकर माता सीता पर बनाया था।

भारत की पुराण कथाएँ केवल सुनने, सुनाने और कीर्तन करने भर के लिये नहीं होती। इनमें जीवन को उन्नत बनाने और संभावित आपदाओं से बचने का संदेश होता है। वह अवतार कथा हो अथवा किसी ऋषि मनीषी की दृष्टि का सैद्धांतिक वर्णन। सबमें भविष्य की दीवार पर उभरने वाली घटनाओं और उसके परिणामों का पूर्वाभास होता है। ताकि समाज सचेत रहे। रामचरितमानस और महाभारत के लगभग सभी कथानक ऐसे हैं जिनमें वर्तमान समय में घट रही घटनाओं की मानों भविष्यवाणी की गई है। ये दोनों ग्रंथ ऐसे है, जिनमें सभ्य समाज और सत्पुरुषों के सामने आने वाली समस्याओं और दुष्टों के कुचक्र का चित्रण है। प्रत्येक प्रसंग में समाज जीवन को उन्नत बनाने के सूत्र हैं।

रामचरितमानस में ऐसा ही एक प्रसंग स्वर्णमृग के आने, माता सीता के मोहित होने और वेष बदलकर रावण द्वारा माता सीता के हरण का है। यह प्रसंग वाल्मीकि रामायण में भी है और रामचरितमानस में भी। हाँ, प्रस्तुतीकरण में थोड़ा अंतर तो है लेकिन मूल कथानक बिलकुल एक–सा है। लगता है रामजी और माता सीता ने वर्तमान समय में घटने वाली घटनाओं को देख लिया था और मोह अथवा आकर्षण के अतिरेक की लीला करके बहन बेटियों को सावधान किया है कि यदि आसक्ति के अतिरेक में विवेक शून्य हो गया तो बहुत बड़ी मुसीबत आ सकती है, अस्तित्व पर भी प्रश्नचिन्ह लग सकता है। माता सीता के जीवन में स्वर्णमृग आता है। वे स्वर्णमृग पर मोहित हो जातीं हैं। और उनके जीवन पर मानों मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ता

है। इस प्रसंग के यथार्थ और संदेश दोनों को समझने की आवश्यकता है।

यह लीला प्रसंग रामचरित मानस के अरण्यकाण्ड में है। जिसमें राक्षसराज रावण और मारीच भी अपनी अपनी भूमिका में है। कथा के अनुसार शूर्पणखा राक्षसराज रावण को माता सीता के रूप सौन्दर्य का वर्णन करती है और रावण उनके अपहरण की योजना बनाता है। इसके लिये वह मारीच का सहयोग लेता है। मारीच 'स्वर्णमृग' का रूप बनाकर सीताजी के सामने आकर कुछ ऐसी उछलकूद करता है जिसे देखकर माता सीता मोहित हो जातीं हैं। वे रामजी से स्वर्णमृग की छाल प्राप्त करने की इच्छा व्यक्त करती हैं। रामजी उस मायावी स्वर्णमृग के पीछे दौड़ते हैं। स्वर्णमृग अपनी योजनानुसार रामजी और लक्ष्मणजी दोनों को सीताजी से दूर ले जाता है। तब रावण वेष बदलकर वहाँ पहुँचता है। पहले अनेक प्रकार की बातें करता है फिर माता सीता का अपहरण करके लंका ले जाता है। लंका लाकर उनपर विवाह करने का दबाव बनाता है। दबाव बनाने का वर्णन सुन्दर काँड में है। रावण मंदोदरी के साथ अशोक वाटिका में आता है। विवाह प्रस्ताव रखकर कई प्रकार के प्रलोभन देता है, जब सीताजी नहीं मानती तो धमकी भी देता है।

आज की परिस्थिति में इस लीला का संदेश समझने से पहले इस प्रसंग का रहस्य जानें। सीताहरण के इस कथानक में लक्ष्मण, रावण और मारीच की अपनी अपनी भूमिकाएँ हैं। हम सब जानते हैं कि भगवान नारायण के लिये दुष्टों का संहार करना कोई कठिन काम नहीं हैं। उनकी भृकुटि चढ़ जाने से ही प्रलय हो सकती है। नारायण का सुदर्शन उनकी इच्छा की गति से शत्रुनाश कर सकता है। भगवान नारायण जहाँ भी हैं, वहीं से दुष्टों का नाश कर सकते हैं फिर वे धरती पर आते हैं। सामान्य मनुष्य की भाँति जीवन जीते हैं। उनके आसपास शोक, संताप, प्रसन्नता, दुःख, सुख आदि सब प्रकार की घटनाएँ घटतीं हैं और वे उनके अनुरूप अपने भाव भी प्रकट करते हैं। यह केवल इसलिये कि मनुष्य सीख सके और यह समझ सके कि किस परिस्थिति का सामना कैसे करना है। यदि परिस्थिति का उचित समाधान निकाला तभी उसका जीवन सार्थक बनेगा। अवतारों का संघर्ष जिन दुष्टों से होता है, वे भी कोई साधारण नहीं होते। वे सब भी नारायण से ही संबंधित होते हैं। जैसे रामायण काल में रावण–कुंभकर्ण। ये दोनों कोई और नहीं, नारायण के पार्षद जय और विजय हैं। ये जय और विजय दोनों जन्म–मृत्यु निद्रा–आहार से परे हैं। यदि नारायण रामजी का रूप लेकर संसार को मर्यादित जीवन सिखाने समझाने धरती पर आये तो जय विजय भी रामजी की लीला में सहयोग करने केलिये रावण और कुंभकर्ण के रूप में धरती पर आये। प्रकृति ने उन्हें दुष्टता की भूमिका निभाने का दायित्व सौंपा था। ताकि मनुष्य को दुष्टों का आचरण, उनकी प्रवृत्ति को पहचान सके। प्रगति केलिये जितना महत्वपूर्ण व्यक्ति का पुरुषार्थ और परिश्रम होता है उतना ही महत्वपूर्ण दुष्टों को पहचान कर उनसे सावधान रहना भी है।

स्वर्णमृग प्रसंग केवल एक लीला है इसके रहस्य को बाबा तुलसी ने स्वयं रामचरित मानस में स्पष्ट किया है। आगे क्या घटने वाला है, यह रामजी और माता सीता दोनों जानते थे। स्वर्णमृग आने से पहले रामजी और माता सीता के बीच एक मंत्रणा होती है। इस मंत्रणा का आभास लक्ष्मणजी को भी नहीं हो पाया। बाबा तुलसी ने लिखते हैं

लछमन हूँ यह मरम न जाना,

जो कछु चरित रचा भगवाना।

अर्थात आने वाले समय का घटनाक्रम दोनों जानते थे और अपनी भूमिका निश्चित करके माता सीता ने अग्नि में प्रवेश कर लिया।

अब प्रश्न उठता है कि जब रामजी और माता सीता सब जानते थे, रावण को भी अवतार का अनुमान हो गया, अपहरण के पहले माता सीता के चरणों को प्रणाम करता हो तो फिर लीला क्यों की ? इस प्रश्न का समाधान लीला के घटनाक्रम में ही स्पष्ट है। इस प्रसंग में स्वर्णमृग अपना मोहक रूप दिखाता है, सीताजी मोहित हो जाती हैं, रावण वेष बदलकर आता है अपहरण करके विवाह के लिये पहले प्रलोभन देता है फिर धमकी भी देता है।

इस प्रसंग के घटनाक्रम को वर्तमान समय में घट रहीं घटनाओं से मिलान करके देखें। आज ऐसी घटनाओं की मानों बाढ़ आ गई है। पहले लड़के अपना नाम और पहचान बदलकर लड़कियों से संपर्क बनाते हैं। अपने बनावटी व्यवहार और मीठी बातों से प्रभावित कर लेते हैं। लड़कियाँ इन छद्मवेषी चेहरों से इतनी सम्मोहित हो जाती हैं कि उन्हें अपने घर परिवार की परवाह भी नहीं करतीं। उनका विवेक शून्य हो जाता है। वे उस बहरूपिये की मीठी बातों में आकर घर से चल देतीं हैं । लड़कियों को पूरी तरह अपने जाल में फँसाकर ये बहुरूपिये मतान्तरण का दबाव बनाते हैं और अनेक प्रकार की धमकी देते हैं। कुछ लड़कियाँ लुट पिट कर पुलिस से संपर्क कर लेतीं हैं अनेक समर्पण करके अपनी संस्कृति, परंपरा से दूर होकर खो जातीं हैं।

रावण आसुरी शक्तियों का प्रतीक है। आसुरी शक्तियों की एक पहचान होती है। वे माँस भक्षी होते हैं, हिंसक होते हैं, गाय की हत्या करना, उनका स्वभाव होता है। वे यज्ञ हवन पूजन पाठ के विरोधी होते हैं। देव लोक से लेकर धरती तक सबको अपने ही मत में ढालना चाहते हैं। असुर देवों और मनुष्यों की भूमि ही नहीं पूरे देश को हड़पना चाहते हैं। रावण को ही देखिये। लंका रावण की नहीं थी। रावण ने कुबेर से छीनी थी और अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया था। सभी लंका निवासियों को असुर संस्कृति में रूपांतरित कर लिया था। रामजी ने अपने पुरुषार्थ, पराक्रम, रणकौशल और एक अच्छी टीम बनाकर लंका को रावण से मुक्त कराई थी।

रामजी और माता सीता जानते थे कि कलियुग में क्या घटने वाला है। नाम रूप बदलकर कैसे षड्यंत्र होंगे। यदि सावधानी नहीं वरती तो भोली भाली लड़कियों का जीवन नर्क बन जायेगा। इसीलिए उन्होंने सतर्क किया। जो दिख रहा, उसे देखकर एकदम मोहित न हो जायें, जो शब्द सुनाई दे रहे हैं उन्हें सुनकर एकदम आकर्षित न हो जायें। भावनाओं के अतिरेक में विवेक शून्य न हो जायें। दृश्य और शब्द दोनों का विश्लेषण करें फिर आगे बढ़ें। मीठी भाषा बोलने वाला और शिष्ट व्यवहार करने वाला हर व्यक्ति भला नहीं होता। कलियुग में निशाचरी माया अपेक्षाकृत अधिक व्याप्ति है। निशाचरों की माया जानी नहीं जा सकती। इसलिये रामचरितमानस के इस प्रसंग में रामजी और माता सीता ने लीला करके बहन बेटियों को सावधान किया है। सावधानी बहुत आवश्यक है।

100 / 125, शिवाजी नगर, भोपाल मो. 9425600339

आलेख

कैलाश चंद्र शर्मा

मानस में श्रीराम का विराट दर्शन

भक्त शिरोमणि गोस्वामी श्री तुलसी दासजी ने अपने महाकाव्य रामचरित मानस में अपने इष्ट श्रीराम को सगुण साकार रूप में प्रस्तुत किया है तथा अनेक प्रसंगों में उन्होंने विराट रूप के दर्शन भी कराए है। श्रीराम ने अपने भक्तों के रुचि अनुरूप अपना स्वरूप दिखाया है। जब भगवान श्रीराम दंडक वन में विरह लीला कर रहे थे, तब सती जी को श्रीराम के ईश्वर तत्व पर संदेह हुआ, कि जो ब्रह्म सर्व व्यापक, सर्वज्ञ, अगोचर है, माया रहित है, वह नारी विरह में इतने व्याकुल क्यों है। मनोज नसावन शंकरजी ने सती जी का संदेह दूर करने का प्रयास करते हुए कहा कि देवी, ये सबके पिता हैं, हर्ष, शोक से परे है, ये स्वयं अखिल ब्रह्मांड के स्वामी है। लेकिन भावी वश सती जी को ज्ञान नही हुआ, और वे श्रीराम की परीक्षा लेने हेतु श्रीसीता जी का रूप धारण कर श्रीराम के आगे जाने लगी।

सुमिरत जाहि मिटइ अज्ञाना। सोई सर्वस्व रामु भगवाना।।

श्रीराम ने उन्हें पिता सहित अपना नाम बताकर प्रणाम किया, ओर कहा कि भोलेनाथ कहाँ हैं। आप अकेली वन में क्यों विचर रही है। सती ने शंकर जी का कहा न मानकर अपने अज्ञान को श्रीराम पर आरोपित किया। भगवान श्रीराम ने अपना चमत्कार दिखाया। उन्हें सीता लखन सहित अपना रूप दिखाया। सती जी की दृष्टि जहाँ–जहाँ गई, उनको सीता लक्ष्मण जी सहित श्रीराम के दर्शन हुए। यह था श्रीराम का सर्व व्यापक रूप। एक बार माता कौशल्या जी ने बालक श्रीराम को पालने में सुलाया व अपने इष्ट देव को नेवेद्य लगाया। उन्होंने अपने पुत्र को नेवेद्य का भोजन करते हुए देखा, बाद में पालने में पुत्र को देखा, दोनों जगह पुत्र को देख कर माता कौशल्या जी को भ्रम हो गया, श्रीराम ने माता को अपना अद्‌भुत रूप का दर्शन कराया।

देखरावा मातहि निज अदभुत रूप अखंड ।

रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रंह्मड ।।

बिस्मित माता ने श्रीराम के अंग अंग में करोड़ों ब्रह्माण्डों के दर्शन किए। माया देखी जो बंधन करती है और भक्ति देखी जो मोक्ष करती है। मां कौशल्या ने प्रभु से चरणों की भक्ति मांगी वह जगत पिता को अपना पुत्र समझ बैठी –

अस्तुति करि न जाइ भय माना ।
जगत पिता मैं सुत करि जाना ।।

विराट दर्शन के प्रकरण में राजा जनक के धनुष यज्ञ में श्रीराम ने भक्तों को अनेक रूप में दर्शन दिए। योगियों को विराट रूप में दुष्ट राजाओं को काल रूप में, विदेह परिवार को सगे संबंधी रूप में तथा जनक नंदिनी श्रीसीता जी को जिस रूप में दिखे उसका कोई कवि वर्णन नहीं कर सकता। श्रीराम के प्रति जिनका जैसा भाव था, उसी रूप में उन्हे दर्शन दिये।

ऐहि विधि रहा जाहि जस भाऊ।
तेहि तस देखउ कौसल राऊ ।।

श्रीराम के वन गमन में समस्त अयोध्या वासी अपने सुर दुर्लभ सुख सुविधा पूर्ण महलों को छोड़ कर श्रीराम के साथ वन को चले। तमसा नदी पर रात्रि विश्राम किया। मंत्री सुमंत को श्रीराम ने मध्य रात्रि को चलने का आदेश दिया। श्रीराम के विरह में लोग अयोध्या आए। श्रीभरत जी ने राज पद स्वीकार नहीं किया, श्रीराम को वापस लाने के लिए चित्रकूट की ओर प्रस्थान किया। सभी श्रीराम के विरह में व्याकुल थे, जो जिस भाव से मिलने का अभिलाषी था उनकी रुचि अनुसार अनेक रूप प्रगट हो कर पल भर में सभी से मिले। श्री तुलसी दासजी कहते है कि श्रीराम समान रूप से सर्व व्यापक है।

सानुज मिलि पल महु सब काहू।
कीन्ह दूरि दुख दारुण दाहू।।

दंडक वन में शूर्पणखा के प्रणय प्रस्ताव को श्रीराम एवम् लक्ष्मण जी द्वारा अस्वीकार करने पर उसने अपना विकराल रूप दिखाया। लखन लाल द्वारा उसे विरूप कर दिया गया। उसने भाई खर दूषण को युद्ध के लिए भड़काया, श्रीराम ने खर दूषण राक्षसों का वध करते हुए, माया से अनेक राम रूप धारण किए। राक्षस गण एक दूसरे को राम समझ कर आपस में युद्ध कर नष्ट हो गए।

सुर मुनि सभय प्रभु देखि माया नाथ
अति कौतुक करयौ।
देखहिं परसपर राम करि
संग्राम रिपुदल लरि मरयो।।

बाली के अंतःपुर में तारा को अपनी सर्व व्यापकता का बोध कराया।

सुनुं पति जिन्हहिं मिलेउ सुग्रीवा।
ते द्वौ बंधु तेज बल सीवा।।
कोसलेस सुत लछिमण रामा।
कालहु जीति सकहि संग्रामा।।

कपिराज सुग्रीव ने श्रीसीता जी की खोज में असंख्य वानर चारों दिशाओं में भेजे। भगवान शंकर जी कहते हैं कि उमा मैंने वह वानर दल देखा था। कोई मूर्ख ही होगा जो उनकी गणना करेगा। विशाल वानर सेना में एक भी वानर ऐसा नहीं था, जिसकी कुशलक्षेम श्रीरघुवर ने नहीं पूछी हो। श्री गोस्वामीजी जी कहते हैं कि यही मेरे आराध्य की सर्व व्यापकता है।

वानर कटक उमा में देखा।
सो मूरख जो करन चह लेखा।।
अस कपि एक न सेना माही।
राम कुशल जेहि पूछी नाही।।

लंका में अपने विराट रूप की अनुभूति श्रीराम ने मंदोदरी को कराई थी। जब रावण की रंग सभा को राघव ने अपने बाण से भंग कर मंदोदरी के

कर्ण फूल रावण के सिर छत्र को गिरा दिया था। इसे महान अपशकुन जान कर रावण को समझाया कि श्रीराम अखंड ब्रह्म हैं। उन्हें साधारण मनुष्य समझने की भूल न करें। रघुकुल मणि विश्वरूप है, पाताल उनका चरण हैं। सीस ब्रह्मलोक है विभिन्न लोक उनके अंगों में स्थित है। सूर्य नेत्र है, काल भृकुटि संचालन है, चंद्रमा मन है, रात और दिन उनका पलक खोलना व बंद करना है।

अहंकार सिव बुद्धि अज, मन ससि चित्त महान।
मनुज बास सचराचर, रूप राम भगवान।

श्रीराम ही मनुष्य रूप में चराचर में वास करते है। तमसा नदी के तट से बिछड़े हुए अयोध्या वासी रघुवर के विरह में बहुत व्याकुल थे, व मिलने को आतुर थे। नंदी ग्राम में श्री हनुमानजी द्वारा श्रीभरत जी को अनुज जानकी सहित श्रीराम के आगमन का सुखद संदेश प्राप्त हुआ। नगर में गुरुजनों, माताओं, पुरवासियों को संदेश दिया गया। सभी आतुर जन श्रीराम के आगमन की प्रतीक्षा में थे। पुष्पक विमान से श्रीराम जानकी लखन एवम उनके वनवासी साथी उतरे। श्रीराम ने गुरुजनों माताओं नगर वासियों को प्रणाम किया। भगवान राम सभी व्याकुल जनों से एक पल में अनेक रूप धारण कर मिले, उमा यह मरम कोई नहीं जान पाया।

अमित रूप प्रगटे तेहि काला।
जथा जोग मिले सबहि कृपाला।।
छ्न महि मिले सबहि भगवाना।
उमा मरम यह काहु न जाना।।

कागभुशुंडि जी कहते है कि हे हरिवाहन, गरुड़जी को बाल लीला करते हुए प्रभु ने मुझे अपना विराट रूप दिखाया था। जब भगवान रामावतार लेते है मैं अयोध्या में उनकी बाल लीलाओं का आनंद लेता हूँ। एक बार कनक भवन में प्रभु श्रीराम खेल रहे थे, वे मुझे पुआ दिखा कर नाच रहे थे। उनके चरण स्पर्श करने हेतु मेरे पास जाने पर भाग जाते थे। कभी रोते कभी हंसते थे, उनकी प्राकृत लीला से मेरे मन में भ्रम हो गया। उनकी माया का प्रभाव हुआ। मैं आकाश में उड़ने लगा, उनकी हाथ की भुजा मुझे पकड़ने हेतु आई। जहां तक मेरी गति थी में उड़ता चला गया। सप्तावरण पार कर गया, भुजा में केवल दो अंगुल का फासला था। प्रभु मुझे व्याकुल देख कर हंसे, मैंने मुख में प्रवेश किया। मैंने उदर में अनेक ब्रह्माण्ड, करोड़ों ब्रह्मा, शिव, विष्णु,सप्त सागर एवम अनेक जड़ चेतन जीव देख। भिन्न–भिन्न दशरथ कौशल्या भरत आदि देखे लेकिन राम रूप दूसरा नहीं देखा ।

भिन्न भिन्न मैं दीख सबु अति बिचित्र हरिजान।
अगिनित भुवन फिरेउँ प्रभु राम न देखेउँ आन।।

अनेक लोक में भटकने के बाद मुझे प्रभु का स्मरण हुआ। मुझे व्याकुल देख कर राघव मुस्कराए। मैं उदर से बाहर आया। अखंड ब्रह्माण्ड नायक ने मुझे अपने विराट रूप का दर्शन कराया जो, बहुत ही अदभुत था। उन्होंने मेरे सर पर हाथ रख कर मुझे वरदान मांगनें को कहा। मैंने श्रीराम से अपनी अविरल, सब सुखों की खान भक्ति मांग ली। जो निर्गुण निराकार अगोचार भेदरहित अनाम रूप रहित है, वही अपने भक्तों के लिए कभी विराट कभी वामन, मत्स्य, नरसिंह, राम कृष्ण आदि का रूप धारण करते है।

डी–6 आकाशवाणी कॉलोनी श्यामला हिल्स भोपाल 462002

डॉ. रंजना शर्मा

क्षमा-एक आदर्श

आप स्तम्ब स्मृति में क्षमा को मनुष्य का सबसे बड़ा गुण माना है, उसमें कहा गया है कि –

क्षमागुणो हि जन्तूनामिहामुत्रसुखप्रद।

(क्षमा प्राणियों का उत्तम गुण हैं यही नहीं क्षमा से इह लोक और परलोक में भी सुख प्राप्त होता है।)

जो वास्तव में संत हैं वे सब के सब क्षमाशील देखे गए हैं। भारत देश सदा से संतप्रधान रहा है। हम इस गुण को दो उदाहरणों द्वारा सम्मुख रख सकते हैं।

अद्‌भुत क्षमाशील महर्षि वशिष्ठ

महर्षि वशिष्ठ ने देवदुर्जय काम और क्रोध दोनों शत्रुओं को सदा के लिए पराजित कर दिया था, अतः ये दोनों निरंतर उनके चरण दबाते रहते थे।

एक बार महाराज विश्वामित्र महर्षि वशिष्ठ को आश्रम में दल–बल के साथ वहाँ पहुंच गए। महर्षि वशिष्ठ ने उनका हार्दिक स्वागत सत्कार किया और आतिथ्य ग्रहण करने को कहा। महर्षि वशिष्ठ के पास नंदिनी नामक एक दिव्य गाय थी, जो सभी कामनाओं को शीघ्र ही पूरी कर दिया करती थी। इस बार भी वशिष्ठ जी की इच्छा के अनुसार उसने यथोचित सामग्री जुटा दी। ऐसा आतिथ्य न तो विश्वामित्र को ही कहीं मिला था और न ही उनके दल–बल को ही मिला था। नंदिनी का प्रभाव देखकर राजर्षि विश्वामित्र ने अपना सबकुछ देकर नंदिनी को वशिष्ठ से लेना चाहा।

वशिष्ठ बोले नंदिनी को मैं नहीं दे सकता क्योंकि नंदिनी से देवता, अतिथि और पितरों की पूजा किया करता हूँ। इसके बिना काम रुक जायगा इसलिए नंदिनी को देना संभव नहीं है। यह सुनकर विश्वामित्र क्रोधित हो गए और सैनिकों को आदेश दिया कि नंदिनी को खोलकर जबरदस्ती ले चलो। नंदिनी ने वशिष्ठ जी से कहा–

देव, क्या आपने मेरा त्याग कर दिया है ?

वशिष्ठ – नहीं देवी! मैंने तुम्हारा त्याग नहीं किया है। मैं तो चाहता हूँ कि तुम मेरे साथ ही रहो। लेकिन मेरा कर्तव्य है, क्षमा करना। इसके उपरांत नंदिनी ने विश्वामित्र के सैनिकों को वहाँ से भगाने की योजना बनाई किंतु वह भी अहिंसा पूर्वक।उसने अपने संकल्प द्वारा म्लेच्छ, हूण, शक की मजबूत सेना तैयार करदी और उनकी सेना इतनी अधिक थी कि विश्वामित्र के एक–एक सैनिक को पाँच–पाँच सैनिकों ने घेर लिया। नंदिनी के सैनिक इतने भयानक थे कि विश्वामित्र के सारे सैनिक वहाँ से भाग खड़े हुए । नंदिनी के सैनिकों ने उन्हें तीन योजन दूर भगा दिया। पर किसी को भी मारा नहीं –

न च प्राणैर्वियुज्यन्ते केचित् तत्रास्य सैनिका

अब तो विश्वामित्र और भी आगबबूला हो गए। उन्होंने निहत्थे वशिष्ठ पर अस्त्र–शस्त्र बरसा दिए। वशिष्ठ जी ने केवल अपने बचाव के लिए मात्र एक छड़ी ले रखी थी।इस छड़ी का इतना प्रभाव था कि सारे अस्त्र–शस्त्र लौट गए।

विश्वामित्र लज्जित और निरुत्तर होकर चले गए।और घर आकर बदला लेने के लिए नयी योजना बनाते हुए एक राक्षस को भेजा जिसके द्वारा वशिष्ठ के सभी पुत्रों को खा लिया गया। फिर भी वशिष्ठ जी ने विश्वामित्र को क्षमा कर दिया।

अब आधुनिक संत श्री उग्रानंद जी की क्षमाशीलता देखते हैं –ये बहुत पहुँचे हुए संत,सदा ब्रह्मानन्द मैं लीन रहते थे। उनके लिए ब्रह्माण्ड का कण– कण उनके लिए ब्रह्म था।चाहे जीवन में दुःख हो या सुख हो सब ब्रह्म ही है।

एक बार वे उन्नाव जिले के एक गांव में पहुंचे, आध्यात्म में लीन थे रात हो गई थी अतः गांव के बाहर पेड़ के नीचे आसन जमा कर बैठ गए। उसी रात चोर किसी किसान का बैल चुरा ले गए। किसान ने शोर मचाना शुरू कर दिया।कुछ टोलियां बाहर निकल पड़ी, उनकी नजर संत पर पड़ी। वे उन्हें चोर समझकर पीटने लगे।इस पर प्रभु की लीला समझ आनंद लेने लगे, उन्होंने सोचा किसी जन्म का पाप होगा,जिसका ये लोग सुन्दर प्रायश्चित करा रहे हैं।मनमाना पीटकर और बाँधकर वे लोग संत को गांव में ले आये और यही नहीं कोठरी में बंद कर दिया।

वहाँ का थानेदार संत को पहचानता था वह दौड़कर संत के चरणों में गिर पड़ा और बोला जिन्होंने इन्हें पीटा है इनमें से प्रत्येक को खूब पीटो।जब उनको मार पड़ रही थी तो उग्रानंद जी सामने खड़े हो गए और बोले –'ये बेचारे तो भ्रम में हैं इनका क्या दोष है।'

संत थानेदार से बोले कि अगर तुम्हारे पास कुछ पैसे हों तो इनको कुछ मीठा मंगाकर खिला दो और पानी पिला कर छोड़ दो।

थानेदार संत के स्वभाव से परिचित थे उन्होंने गांव वालों को छोड़ दिया।

संतों के लिए क्षमा ही आदर्श होती है।

सी–24, सिद्धार्थ लेक सिटी, भोपाल 462022

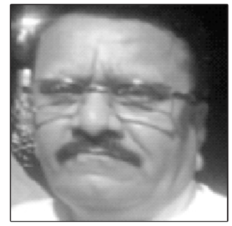

सुभाष चंद्र

कलियुग में मोक्ष प्राप्ति का सरल मार्ग है भक्ति

प्राणी मात्र में ईश्वर का दर्शन, वर्णाश्रम धर्म के नियत कर्तव्यों का सतोगुण की प्रधानता के साथ निष्काम भाव से निष्ठा पूर्वक अनुपालन, कर्मफल के प्रति अनासक्ति, व्यष्टि का समष्टि भाव में परिवर्तन, आदि परमात्मा के निकट जाने के भिन्न भिन्न चरण है परंतु इन सभी का उद्गम वह भक्ति भाव है जो ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण का पर्याय है। यह भक्ति ही मोक्ष प्राप्ति का मार्ग है। (गीता12/6,7) के अनुसार समस्त कर्म कृष्णार्पण कर अविचल भक्ति एवं ध्यान से मोक्ष प्राप्त होता है।

ब्रह्म देव ने मुक्ति के सभी साधनों में श्रीमद्भागवत को सर्वश्रेष्ठ बताया। और भागवत पुराण का मुख्य विषय ही भक्ति है। वास्तव में भक्ति भाव ही भागवत धर्म है, यही श्रीमद्भागवत का सार है। श्रीमद्भागवत की प्रतीकात्मक कथा में भगवान ने मुक्ति को भक्ति की दासी बताया। तात्पर्य यह कि भक्ति प्राप्त होने पर उसकी दासी होने के कारण मुक्ति स्वतः प्राप्त हो जाती है। मुक्ति अथवा मोक्ष का भक्ति से श्रेष्ठ दूसरा मार्ग नहीं है। जो फल तपस्या योग समाधि से नहीं मिलता कलियुग में भक्ति से प्राप्त होता है। भागवत महात्म्य 1.68

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशतेदनन्तरम्।।

(गीता18/55)

केवल भक्ति से मुझे यथा रूप समझ कर बैकुंठ प्राप्त किया जा सकता है। अर्थात् मोक्ष प्राप्ति का प्रयास कर्म से प्रारंभ होकर ज्ञान मार्ग द्वारा भक्ति में पूर्ण होता है। अपने इष्ट श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम और समर्पण ही भक्ति की परिभाषा है। गीता के भक्ति योग अध्याय 12 में श्रीकृष्ण ने ईश्वर प्राप्ति के लिये भक्ति योग को सर्वश्रेष्ठ बताया है।

ज्ञानयोग और कर्मयोग का अगला चरण भक्ति है। यह भक्ति श्रीकृष्ण की प्राप्ति का अर्थात मोक्ष के मार्ग का अंतिम चरण है। यद्यपि केवल भक्ति अपूर्ण है जब तक

यह कर्म से संयुक्त न हो। परंतु कर्म अनासक्त भाव से परमात्मा के लिये किए जाने चाहिये। भगवान राम एवं भगवान कृष्ण के संपूर्ण जीवन के कार्यों का यही संदेश है।

पांडवों को धर्मोपदेश देते समय भीष्म ने कहा था देव और पुरूषार्थ कार्य रूपी रथ के दो पहिये है परंतु देव सिद्धि के लिये भी पुरुषार्थ आवश्यक है। अतः पुरूषार्थ श्रेष्ठ है (महाभारत शांतिपर्व)। यहां भी कर्म की महत्ता का प्रतिपादन है परंतु कर्म की सार्थकता श्रीकृष्ण के चरणों में इसके समर्पण में है। यह भक्ति का क्रियात्मक रूप है।

शंकराचार्य द्वारा मोक्ष प्राप्ति के लिये अनुशंसित ज्ञान मार्ग का अगला चरण श्रीकृष्ण ने गीता में भक्ति को बताया। आदि शंकराचार्य द्वारा उपदेशित यति के लिये कर्म सन्यास और गीता में उपदेशित चारों वर्णों के लिये कर्मफल का त्याग या कर्मयोग दोनों में क्रियात्मक दृष्टि से अंतर होकर भी इनमें निहित भावनाओं में विशेष अंतर इसलिये नहीं है क्योंकि दोनों में पूर्ण समर्पण का भाव है। दोनों का प्रेरणा स्रोत वह वैराग्य भाव है जो भक्त की पहचान है।

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

गीता 18.66

सभी प्रकार के ज्ञान और धर्म को छोड़ मेरी शरण में आओ। मैं तुम्हारा सब पापों से उद्धार कर दूंगा। वास्तव में श्रीकृष्ण की शरण या पूर्ण समर्पण और भक्ति एक दूसरे के पर्याय हैं।

निष्कर्ष यह है कि ज्ञान, कर्म और भक्ति तीनों के समन्वय से ब्रह्म प्राप्ति सरल होती है। इनमें भी कलियुग के लिये अनुशंसित भक्ति का सबसे सरल रूप नाम संकीर्तन है। कलियुग के पूर्ववर्ती युगों में भक्ति तपस्या के कठिन मार्ग से की जाती थी। श्रीमद्भागवत के अनुसार कलियुग मे केवल नाम संकीर्तन से ही सारे स्वार्थ परमार्थ सिद्ध होते है। श्रीमद्भागवत के द्वितीय स्कन्ध में शुकदेव जी कहते हैं, जो व्यक्ति निष्काम हो सकाम हो या मोक्ष की कामना रखता हो सभी श्रेणी के मनुष्यों को परम पुरुषोत्तम भगवान की भक्ति करना चाहिये। इसी में उनके समस्त हित सिद्ध हो जाते है। यही भक्ति मार्ग की सरलता है। तप, योग, समाधि से प्राप्त दुर्लभ फल कलियुग में श्रीहरि नाम संकीर्तन से प्राप्त होता है। इसी दुर्लभ गुण के कारण परिक्षित ने कलियुग का वध नही किया। (भागवत महात्म्य अध्याय 1/68)

श्रीमद्भागवत एकादश स्कन्ध के अनुसार स्वयम्भुव मनु के प्रपौत्र और नाभि के पुत्र ऋषभ देव जिसे शास्त्रों में वासुदेव का अंशावतार कहा है, का अवतरण मोक्ष धर्म के उपदेश के लिये हुआ। उनके एक सौ पुत्रों में से नौ पुत्र श्रेष्ठ सन्यासी हुए। ये विदेह राज निमि के यज्ञ में पहुंचे, निमि द्वारा इनका सत्कार कर प्रार्थना करने पर प्रथम सन्यासी कविजी ने भागवत धर्म का उपदेश देते हुए कहा अपने समस्त कर्मों को भगवान नारायण को समर्पण करना ही भागवत धर्म है। इनका भी आशय कर्म फल के त्याग से है। जिसमें भक्ति भाव की प्रधानता है। निमि द्वारा भगवत भक्त का लक्षण जानने की जिज्ञासा पर द्वितीय सन्यासी हरिजी ने कहा, समस्त प्राणियों में आत्मा रूप में एवं समस्त प्रकृति में भगवत सत्ता के दर्शन करता है, उसे उत्तम भागवत जानें। यहां उनका आशय समस्त प्राणियों और पदार्थों के प्रति उस ज्ञान दृष्टि से है जिसमें इस संपूर्ण परा एवं अपरा प्रकृति में परमात्मा की उपस्थिति अनुभव होती है। राजा निमि के उपासना विधि संबंधी प्रश्न पर योगीश्वर करभाजन जी ने कलियुग में नाम संकीर्तन को स्वार्थ एवं परमार्थ

साधने का श्रेष्ठ उपाय बताया एवं कहा, कलियुग में बुद्धिमान पुरुष ऐसे यज्ञों द्वारा ईश्वर की आराधना करते हैं। जिसमे उनके नाम गुण व लीला के कीर्तन की प्रधानता होती है। श्रीमद्भागवत एकादश स्कन्ध अध्याय 5/32। द्वादश स्कंध में भी भगवान के नाम संकीर्तन की महिमा का वर्णन है। सत्ययुग में भगवान का ध्यान करने से, त्रेता में यज्ञ से, और द्वापर में पूजा से जो फल प्राप्त होता है वह कलियुग में भगवान के नाम के संकीर्तन से प्राप्त हो जाता है। श्रीमद भागवत पुराण द्वादश स्कंध 3/52, ।

भक्ति के इसी रूप को भगवान चैतन्य महा प्रभु ने मोक्ष प्राप्ति का सुगम उपाय बताया। मोक्ष प्राप्ति एवं इहलौकिक जीवन की सफलता का सरल उपाय प्रेमावतार महात्मा चैतन्य महा प्रभु ने प्रेम और भक्ति से परिपूर्ण निरंतर श्री हरि कीर्तन बताया। उनके द्वारा दिया गया बत्तीस अक्षरों वाला महामंत्र हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।। का भक्ति पूर्वक जाप करने पर निश्चय ही श्री हरि की प्राप्ति होगी।

सी 2—188, व्यास नगर, उज्जैन मो. 9424561450

श्रद्धांजलि

श्री दिलबाग सिंह राय गांधी पूर्व कोषाध्यक्ष, तुलसी मानस प्रतिष्ठान ने दिनांक 19 अगस्त 2025 को साकेत प्रयाण किया है। 1941 में जन्मे श्री गांधी तुलसी मानस प्रतिष्ठान से अनन्य रूप से स्थापना काल से जुड़े रहे। उनके द्वारा पूज्य पंडित रामकिंकर उपाध्याय और दीदी मंदाकिनी रामकिंकर का अपने निवास पर आतिथ्यभार प्रायः संवहन किया। इस प्रयोजन से उनके सहित उनके परिवार का प्रतिष्ठान के प्रति योगदान अप्रतिम है।

प्रतिष्ठान श्री गांधी की प्रभुपद प्रीति और प्रतिष्ठान को प्रदान किये योगदान के लिए स्मरण करते हुए भगवान से प्रार्थना करता है कि वे उन्हें देवलोक में अपनी सन्निधि प्रदान करें।

रघुनंदन शर्मा
कार्याध्यक्ष, एवं मानस भवन परिवार

आलेख

संदीप परिहार

प्रेम की मूर्ति : भरत

रामायण के पात्रों में भरत का चरित्र सबसे अधिक उज्ज्वल कहा जाता है। भरत ने जितनी प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना किया और जिस धैर्य तथा साहस के साथ किया तथा जितनी परीक्षाएं भरतजी ने दी उतनी यदि किसी दूसरे के सामने आयी होतीं तो वह निःसहाय और निर्बल पड़ जाता।

किन्तु श्री भरत सर्वदा अपरिमेय ही सिद्ध हैं। प्रारंभ से ही प्रभु श्रीराम का अनुज भरत पर विशेष अनुग्रह उदार स्नेह रहा। बाल क्रीड़ाएं करते हुए भी प्रभु श्रीराम अनुज भरत के साथ अद्‌भुत आनंद लेते है।

उनके जन्म से ही पहले उनकी माता कैकेयी के विवाह से भी पूर्व, उनके नाना ने महाराज दशरथ से प्रतिज्ञा करा ली थी कि कैकेयी का पुत्र ही राज्य का अधिकारी होगा। इसी शर्त पर कैकेयी का विवाह हुआ था। मन्थरा के उपदेश से कैकेयी ने इसी मनोरथ की पूर्ति के लिये राजतिलक के समय जब श्रीराम प्रभु एवं सभी अयोध्यावासी कितनी आतुरता और विकलता से इस घड़ी की प्रतीक्षा कर रहे थे, तब कुठाराघात कर दिया। सभी प्रकार से प्रारंभ से अपने पुत्र भरत के जीवन को कंटकाकीर्ण कर दिया। नाना, मामा आदि सबके सब राज–कार्य में कुशल और भरत के हर तरह से मददगार थे। प्रभु श्रीराम एवं अनुज लक्ष्मणजी एवं सीताजी के वनवास के 14 वर्ष का समय भी कम नहीं होता। पर भरतजी का स्वभाव प्रारंभ से प्रभु श्रीराम के प्रति असीम श्रद्धा एवं प्रेम से पूर्ण रहा। उनके लिये यह दुर्लभ और कितनी कष्टदायक कल्पना थी कि राम वन में रहें और वे राज्य का सुख भोगें !

कैकेयी ने जो दो वरदान मांगे थे, उनमें यह नहीं था कि भरत 14 वर्ष राज्य करें और बाद में आकर राम राज्य ले लें। उसने साफ कहा था कि 'भरत का राज्य बिना किसी शर्त के है और राम 14 वर्ष वन में रहें'। वाल्मीकिजी ने मन्थरा की उक्ति इस

प्रकार लिखी है–

तौ च याचस्व भर्तारं भरतस्याभिषेचनम् ।
प्रव्राजनं च रामस्य वर्षाणि च चतुर्दश ।।
चतुर्दश हि वर्षाणि रामे प्रव्राजिते वनम् ।
प्रजाभावगतस्नेहः स्थिरः पुत्रो भविष्यति।

(वाल्मीकि रामायण बाल कांड 9.20–21)

अर्थ : – 14 वर्ष तक जब राम वनवासी रहेंगे तो इतने दिनों में 'पुत्र' भरत–प्रजा का स्नेह–भाजन हो जायेगा और प्रजा के ह्रदय में स्थान पा लेने पर भरत स्थिर हो जायेगा। फिर उसका राज्य किसी के हिलाये न हिलेगा। उनके नाना ने ही इसका बीज बो रखा था। मन्थरा ने उसे अंकुरित और पल्लवित किया था, कैकेयी ने उसे पुष्प–फल– सम्पन्न बनाया था माता उन्हें राज्य दे रही थी। पिता ने उन्हें राज्य देने की बात कहकर ही प्राण छोड़े थे। वशिष्ठ आदि समस्त ऋषिगण और मंत्रीगण उनके राज्याभिषेक की तैयारी किये बैठे थे। किन्तु भरत विशुद्ध भक्ति के अवतार हैं। प्रभु श्रीराम से विमुख होने की भरतजी स्वप्न में भी नहीं सोच सकते थे। उनके लिए राज्य, सेना, संपत्ति तिनके के समान थे।

भरत का मूलमंत्र बस यही सदैव रहा कि 'मेरे तो राम दूसरा न कोई।' राजा दशरथ ने कैकेयी को समझाते हुए कहा "**रामादपि हितं मन्ये धर्मतो**" अर्थात धर्म में भरत को मैं राम से भी बढ़कर समझता हूं। राम के बिना भरत कभी राज्य स्वीकार न करेंगे। राम के चरित्र में राजधर्म और धर्मनीति की गंगा–यमुना बहती हैं, परन्तु भरत का चरित्र तो पवित्र गंगोत्री है। भरतजी जब नाना के यहां से बुलवाये गये थे तो सीधे माता कैकेयी के पास पहुंचे। लेकिन नगर और राजमहल के शोक मिश्रित सन्नाटे को देखकर वे सन्देह और आश्चर्य में थे। राजमहल में जाते ही उन्होंने अपने पिता दशरथ,प्रभु श्रीराम की कुशलता के बारे में पूछा।

अभिषेक्ष्यति रामं तु राजा यज्ञं नु यक्ष्यति ।
इत्यहं कृतसंकल्पोहटो यात्रामयाशिषम् ।।
तदिदं ह्यन्यथाभूतं व्यवदीर्ण मनो मम ।
पितरं यो न पश्यामि नित्यं प्रियहिते रतम् ।।
यो मे भ्राता पिता बन्धुर्यस्य दासोऽस्मि संमतः।
तस्य मां शीघ्रमाख्याहि रामस्याक्लिष्टकर्मणः ।।
पिता हि भवति ज्येष्ठो धर्ममार्यस्य जानतः ।
तस्य पादौ ग्रहीष्यामि स इदानीं गतिर्मम।।

(वाल्मीकि रामायण अयोध्या काण्ड 72. 27–28,32–33)

अर्थात् मैं तो यह सोचकर चला था कि या तो राजा (दशरथ) श्रीराम का अभिषेक करेंगे या कोई यज्ञ करेंगे। परन्तु यहां तो मैंने कुछ और ही देखा, जिससे मेरा ह्रदय विदीर्ण हो गया। आज मैं अपने प्रिय और हितचिन्तक पिता जी को नहीं देख रहा हूँ। जो मेरे भाई, पिता, बन्धु आदि सब कुछ हैं, जिनका मैं दास हूं, भैया श्रीराम का पता मुझे शीघ्र बताओ। बड़ा भाई पिता के सदृश होता है, मैं भैया राम के पैरों पड़ूंगा, आज वही मेरे लिये सब कुछ हैं।

जब कैकेयी ने कहा कि राम को वनवास दे दिया गया, तो भरत डर गये। उन्हें सन्देह हुआ कोई अनुचित कार्य तो नहीं हो गया जिसका यह दण्ड मिला। लेकिन कैकेयी ने बताया कि "यह सब कुछ मैंने तुम्हारे लिये किया है। तुम अब राजगद्दी पर बैठो"। इसके उत्तर में भरत ने जो कुछ कहा है, उसमें हम भरत के ह्रदय के अन्तःकरण में भरतजी का अविकल रूप देख

सकते है। अत्यंत दुखी होकर भरत बोले– शोक सन्तप्त मेरे जैसा अभागा राज्य लेकर क्या करेगा, जो आज पिता से भी हीन है और पितृतुल्य बड़े भाई से भी विलग है। हे माता! तूने मुझे दुःख पर दुःख दिया, तूने मेरे घावों पर नमक छिड़का, पिताजी को अत्यंत दुख पहुंचाया जिससे वे परमधाम को चले गये और भैया राम को वनवास दिया। मैं समझता हूं कि तुझे यह मालूम नहीं है कि मेरा राम के प्रति कैसा भाव है, इसी कारण तूने राज्य के लोभ से यह अनर्थ किया। मैं राम और लक्ष्मण के बिना किसके बल पर राज्य करूंगा? यदि भैया राम तुझे सदा माता के तुल्य न समझते होते तो आज तुझ जैसी पापिनी का त्याग करने में भी मुझे कोई संकोच न होता। माता, तू राज्य से भ्रष्ट हो, अरी दुष्टा, क्रूरे ! तू धर्म से पतित है, ईश्वर करे, मैं मर जाऊं और तू मेरे लिये रोया करे। तू माता के रूप में मेरी शत्रु है। तूने राज्य के लोभ से अपने पति की हत्या की है। तू मुझसे बात न कर. तू याद रख, पिता और भाई के प्रति जो तूने पाप किया है, मैं उसका पूरा प्रायश्चित्त करूंगा और अपना यश भी बढ़ाऊंगा। राम को राज्य देकर मैं अपना पाप धोऊंगा और तब अपने को कृतकृत्य समझूंगा.'इससे यह मालूम होता है कि कैकेयी के कृत्य से भरत को कितनी मर्मान्तक वेदना हो रही है । उनका हृदय धार्मिक भावना से परिपूर्ण हैं. उनको राज्य दिलाने के लिये उनकी माता ने जो कार्य किया है उसे वह घोर पाप समझ रहे हैं एवं इसके प्रायश्चित के लिये अपनी मृत्यु मांग रहे हैं।

भरत ने सब दोष माता के ऊपर ही रखा है। अपने पिता दशरथ के विरुद्ध उन्होंने एक शब्द भी नहीं कहा। यह भरत का पिता के प्रति पितृत्व भाव है। यह भी भरत के चरित्र की एक विशेषता है। जबकि लक्ष्मण और शत्रुघ्न ने तो बड़े स्पष्ट शब्दों में चाहे परोक्ष में ही सही अपने पिता को खरी–खोटी सुनायी है। परन्तु भरत के मुंह से उनके लिये एक भी कटु शब्द नहीं निकला। प्रभु राम की पितृभक्ति आदर्श है। वहीं भरतजी का अपने पिता के प्रति प्रेम अद्भुत अविरल और सभी माताओं के प्रति आदर, स्नेह एवं प्रेम अतुलनीय है। भरत राम के प्रेम में सराबोर थे। उनके सर्वस्व राम थे। राम का प्रेम ही उनका प्रेमपात्र था वह तो राम के प्रेम के भूखे थे।

हन्यामहमिमां पापां कैकेयीं दुष्टचारिणीम्।
यदि मां धार्मिको रामो नासूयेन्मातृघातकम्।।
(वाल्मीकि रामायण अयोध्या काण्ड 78.22)

अर्थात् मैं इस पापी और दुष्ट कैकेयी को मार डालूंगा। यदि धर्मात्मा राम मुझसे असूया न करते तो मैं अपनी माता का विनाशक बन जाता। इन बातों से स्पष्ट है कि भरत का पवित्र हृदय राम की भक्ति में तल्लीन और राम के प्रेम में रत् न था ? कैकेयी से मिलने पर जब भरत को सब बातें मालूम हुई और भरत के आने की खबर कौसल्या के कान तक पहुंची तो भरत इन्हें जिस धैर्य और कितनी दृढ़ता से सब माताओं को ढांढस बंधाते है सात्वंना देते है, यह अदभुत है।

भरतं प्रत्युवाचेदं कौसल्या भृशदुःखिता।।
इदं ते राज्यकामस्य राज्यं प्राप्तमकण्टकम्।
सम्प्राप्तं बत कैकेय्या शीघ्रं करेण कर्मणा।।
क्षिप्रं मामपि कैकेयी प्रस्थापयितुमर्हति ।।

अथवा

स्वयमेवाऽहम् कामं वा
स्वयमेवाद्य तत्र मां नेतुमर्हसि ।
इदं हि तत्र विस्तीर्ण धनधान्यसमाचितम्।

हस्त्यश्वरथसम्पूर्णं राज्यं निर्यातितं तया ।।
इत्यादिबहुभिर्वाक्यैः क्रूरैः संमर्टिसतोऽनघः।
विव्यथे भरतस्तीनं ब्रणे दुःखेन सूचिना ।।
पपात चरणौ तस्यास्तदा सम्भ्रान्तचेतनः ।
विलप्य बहुधाऽसंज्ञो लब्धसंशस्तदानवत्।।
(वाल्मीकि रामायण अयोध्या काण्ड 75.10–13)

अर्थात् आर्या मनस्विनी कौसल्या भी दुःख से रो पड़ीं और उन्हें छाती से लगाकर अत्यन्त दुःखित हो भरत से इस प्रकार बोलीं– "बेटा ! तुम राज्य चाहते थे न? सो यह निष्कण्टक राज्य तुम्हें प्राप्त हो गया; किंतु खेद यही है कि कैकेयी ने जल्दी के कारण बड़े क्रूर कर्म के द्वारा इसे पाया है। क्रूरतापूर्ण दृष्टि रखने वाली कैकेयी न जाने इसमें कौन–सा लाभ देखती थी कि उसने मेरे बेटे को चीर वस्त्र पहनाकर वन में भेज दिया और उसे वनवासी बना दिया। अब कैकेयी को चाहिये कि मुझे भी शीघ्र ही उसी स्थान पर भेज दे, जहां इस समय सुवर्णमयी नाभि से सुशोभित मेरे महायशस्वी पुत्र श्रीराम हैं। अथवा सुमित्रा को साथ लेकर और अग्निहोत्र को आगे करके मैं स्वयं ही सुखपूर्वक उस स्थान को प्रस्थान करूंगी, जहां श्रीराम निवास करते हैं। यह धन–धान्य से सम्पन्न तथा हाथी, घोड़े एवं रथों से भरा–पूरा विस्तृत राज्य कैकेयी ने (श्रीराम से छीनकर) तुम्हें दिलाया है। इस तरह की बहुत–सी कठोर बातें कहकर जब कौसल्या ने निरपराध भरत की भर्त्सना की, तब उनको बड़ी पीड़ा हुई, मानों किसी ने फोड़े में सूई चुभो दी हो। राम–वनवास पर व्याकुल कौसल्या की दयनीय दशा देखकर भरत का कोमल हृदय दुःख से कातर हो उठा। उनका कांपना, कलपना और बिलखना देखकर भरत घबरा गये और जब उन्होंने देखा कि कौसल्या राम–वनवास का कारण उन्हीं (भरत) को समझ रही हैं तब तो उनके दुःख का पारावार न रहा। कौसल्या के कठोर आक्षेपों से भरत का चित्त विचलित हो गया और वह मूर्छित होकर कौसल्या के चरणों पर गिर पड़े। जब होश में आये तो आंसू भरे नेत्र और कण्ठ से 'हा राम' 'हा राम' कहकर इधर उधर पागलों की भांति ताकने लगे। उनकी दीनहीन दशा देखकर माता कौसल्या भी घबरा गयीं और भरत को गोद में बिठाकर स्वयं रोने लगीं. उन्होंने कहा–

मम दुःखमिदं पुत्र भूयः समुपजायते।
शपथैः शपमानो हि प्राणानुपरुणत्सि मे।।
दिष्ट्या न चलितो धर्मादात्मा ते सहलक्षणः।
वत्स सत्यप्रतिज्ञो हि सतां लोकानवाप्स्यसि।
इत्युक्त्वा चाङ्कमानीय भरतं भ्रातृवत्सलम्।
परिष्वज्य महाबाई रुरोद भृशदुःखिता।।
(वाल्मिकी रामायण अयोध्या काण्ड 75.60–63)

अर्थात् बेटा! तुम शपथ खाकर जो मेरे प्राणों को पीड़ा दे रहे हो, इससे मेरा यह दुःख और भी बढ़ता जा रहा है। 'वत्स! सौभाग्य की बात है कि शुभ लक्षणों से सम्पन्न तुम्हारा चित्त धर्म से विचलित नहीं हुआ है। तुम सत्यप्रतिज्ञ, धर्मशील हो, इसलिये तुम्हें सत्पुरुषों के लोक प्राप्त होंगे। ऐसा कहकर कौसल्या ने भ्रातृभक्त महाबाहु भरत को गोद में खींच लिया और अत्यन्त दुःखी हो उन्हें गले से लगाकर वे फूटकर रोने लगीं।

सी–32, सूर्या आवसीय परिसर, सी–सेक्टर, बीमाकुंज कोलार मार्ग, भोपाल
मो. 9630418892

सीमाहरि शर्मा

द्वादश ज्योतिर्लिंग स्तुति

हे ! भोले शंकर नमस्कार!
हे! शिव सुंदर करुणावतार
प्रभु आदि अनन्ता निर्विकार
कर्ता, हर्ता, संसार-सार
हे भोले शंकर नमस्कार!
ओंकारेश्वर, केदारनाथ
हे! बैद्यनाथ हे! विश्वनाथ
हे! त्रयम्बकेश्वर, घृष्णेश्वर
हे ! तीर्थ धाम श्री'रामेश्वर
हे! भालचन्द्र भीमाशंकर
कैलाशपति प्रभु अखिलेश्वर
हे शिव त्रिलोचन! नमो नमः
भव ताप विमोचन नमो नमः
सच्चिदानन्द शिव नमो नमः
आनन्दकन्द शिव नमो नमः
भस्माङ्ग विभूषण गुणकारी
सर्वेश्वर निर्गुण निराकार
कर्ता हर्ता संसार सार
है भोले शंकर नमस्कार
लय-प्रलयेश्वर शिव अधिपति जग
'हे नागेश्वर' जय जय त्रिकाल
जड़ जंगम सब में आप प्रभो
हरने वाले भव ताप प्रभो
यह सृष्टि सृजित करने वाले
पल भर में सब हरने वाले
जय महाकाल हे! विश्वेश्वर
शितिकण्ठ,उमापति,योगेश्वर
पशुपति मृत्युंजय नागेश्वर
हे आशुतोष, करुणाकर शिव
हे अखिल अधीश्वर परमेश्वर
कर्ता हर्ता संसार सार
हे भोले शंकर नमस्कार।
घट-घटवासी अर्धनारीश्वर
गंगाधर शशिशेखर ईश्वर
हे मल्लिकार्जुन जय सोमनाथ
शिवशंकर जय हे नागनाथ
जय गिरिजापति शिव लोकेश्वर
त्रैलोक्य भूप जय कुंडेश्वर
त्रिपुरान्तकाय शिव नमो नमः
गौरीप्रियाय शिव नमो नमः
हे! शिव सुंदर करुणावतार
कर्ता हर्ता संसार सार
प्रभु आदि अनन्ता निर्विकार
हे भोले शंकर नमस्कार।

7 डी, 402, रीगल टाउन, अवधपुरी, भेल, भोपाल मो. 8839489679

मानस भवन में तुलसी जयंती समारोह के अंतर्गत रामकथा प्रवचन प्रसंग

प्रवचनकर्त्ता : पूज्य दीदी मंदाकिनी श्रीरामकिंकर

26 जुलाई 2025 से 31 जुलाई 2025

तुलसी मानस प्रतिष्ठान के तत्वावधान में गत 5 दशकों से संपन्न होने वाला वार्षिक अनुष्ठान पंच दिवसीय रामकथा यज्ञ आज मानस भवन में पंडित रामकिंकर सभागार में संपन्न हुआ। मानस की अंतर्राष्ट्रीय प्रवक्ता पं.पू.दीदी मां मन्दाकिनी श्रीरामकिंकर ने अपने प्रवचनों में कहा कि प्रतिस्पर्धा और गति के युग में व्यक्ति संघर्ष करता हुआ सफलता किस प्रकार प्राप्त करे, उसमें भगवान श्रीराम और विशेषतः उनके परम नैष्ठिक सेवक सकल गुणनिधान हनुमानजी महाराज की क्या भूमिका और प्रेरणा हो सकती है, इस विषय को केन्द्रित रखकर जिज्ञासु और प्रबुद्ध श्रोताओं के समक्ष मानस का गूढ़ चिन्तन प्रस्तुत किया। उन्होंने रामकथा के हनुमान चरित्र की अद्भुत व्याख्या करते हुए परमपूज्य दीदी ने कहा कि श्रीराम से पहले रावण अन्य दो महारथियों के द्वारा परास्त किया गया था। बालि ने तो छः महीने अपने बाएं कांख में उसे दबाकर रखा था और सहस्त्रार्जुन ने भी रावण को युद्ध में पराजित किया था पर हम न तो बालि की पूजा करते हैं और न ही सहस्त्रार्जुन की। हम श्रीराम के विजयपर्व को मनाते है क्योंकि वह रावण नामक व्यक्ति नहीं, रावणत्व की वृत्ति के विरुद्ध युद्ध था। दीदी मंदाकिनी श्रीरामकिंकर ने कहा कि जीवन संग्राम में शाश्वत विजय पाने के लिये जिन सद्गुणों की आवश्यकता है, उसको श्रीरामचरित मानस में गोस्वामी तुलसीदासजी ने धर्मरथ के रूप में प्रस्तुत किया है। रथ के रूप में वर्णन करके गोस्वामी तुलसीदासजी ने केवल एक काव्यात्मक उत्प्रेक्षा ही नहीं की है अपितु उसके द्वारा एक महत्वपूर्ण और गूढ़ सन्देश दिया है। सद्गुण होना ही यथेष्ठ नहीं है। सद्गुणों को जीवन में कौन सा स्थान दें और किस समय पर कौन से गुण का प्रयोग करें और कैसे सद्गुणों में समन्वय स्थापित करें, ये भी एक कला है।

श्री हनुमानजी तो स्वयं एक चैतन्य जीवित धर्म–रथ है। हम और आपका शरीर भी तो रण भूमि ही है। जो 10 इन्द्रियाँ हमें प्राप्त है उसका सदुपयोग जो करेगा, सद्गुणों को जोड़कर धर्ममार्ग पर चलेगा। वह निश्चित रूप से राम राज्य स्थापित करने में सफल होगा। धर्मरथ के जिन चार अश्वों का वर्णन किया गया है बल, विवेक, परहित और इन्द्रिय दमन मानस मर्मज्ञ पूज्य दीदी माँ ने समझाया कि ये घोड़ों को बाँधने की एक पद्धति है। दो आगे और दो घोड़े पीछ जो घोड़ा पीछे बाँधा जाएगा वह आगे के घोड़ो को वेग और शक्ति प्रदान करेगा। जो घोड़ा पीछे होगा कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो, वह आगे वाले घोड़े के पीछे चलने के लिए बाध्य होगा। इसीलिए धर्मरथ के इन्द्रिय दमन और परोपकार

के घोड़े आगे रखे गए और इन्द्रिय दमन के पीछे विवेक का घोड़ा और परोपकार के पीछे बल का घोड़ा बाँधा गया। यदि हम बल और विवेक को आगे बाँधते हैं तो अनर्थ हुए बिना नहीं रहेगा। इसका दृष्टान्त है रावण का चरित्र–जो रथ पर सवार है। वहाँ इन्द्रिय दमन और परोपकार गायब है और रावण में केवल बल का आधिक्य है।

तृतीय दिवस मुख्य अतिथि के रूप में महापौर श्रीमती मालती राय ने कहा कि मानस भवन से निरंतर श्री रामकथा जहाँ हमारी आंतरिक स्वच्छता को बनाये रखती है तो प्रभुकृपा से भोपाल बाह्रय स्वच्छता में भी देश में महत्वपूर्ण स्थान बनाये है जिसकी प्रशंसा माननीय प्रधानमंत्री जी ने भी की है। आपने इस दिशा में आदि सभी से सहयोग की कामना की। समापन दिवस मुख्य आतिथ्य श्री ओ.पी.श्रीवास्तव पूर्व गृहसचिव, मध्यप्रदेश शासन भोपाल ने कहा कि रामकथा हमें सत्य, धर्म मार्ग पर चलने, विवेक और ज्ञान की मीमांसा का दर्शन कराती है। मानस में अपरा विद्या को परा विद्या में परिवर्तित करना ही श्रेष्ठ बताया गया है।

इस अवसर पर पुरस्कार वितरण की श्रृखंला में तुलसी मानस भारती मुख पत्रिका में उत्तम लेख के लिये श्रीमती सुखरानी देवी सर्राफ स्मृति पुरस्कार 2024–25 श्री ओ.पी.श्रीवास्तव पूर्व गृहसचिव को तथा श्रीमती रमादेवी अवस्थी स्मृति पुरस्कार 2024–25 – श्रीमती सुशीला शुक्ला, भोपाल को एवं श्रीमती शकुंतला शर्मा स्मृति पुरस्कार 2024–25 –सुश्री निकिता वर्मा, सिलवानी (रायसेन) को राजनीति शास्त्र में स्नातकोत्तर परीक्षा वर्ष 2024–25 में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर पूज्य दीदी मंदाकिनीजी, कार्याध्यक्ष श्री रघुनंदन शर्मा, श्री प्रभुदयाल मिश्र प्रधान संपादक तुलसी मानस भारती, श्री माघवसिंह दांगी की उपस्थिति में प्रदान किया गया।

समारोहान्तर्गत श्री ओकार सिंह राणा की पुस्तक गूढ़ रहस्य का विमोचन की परमपूज्य दीदी के करकमलों द्वारा किया गया एवं डॉ. लक्ष्मीनारायण गुप्तजी द्वारा रचित 'शिव–स्तुति' की सम्प्रस्तुति श्री अरूण गुप्ता द्वारा की गई।

पं.रामकिंकर उपाध्याय सम्मान अलंकरण समारोह संपन्न

भोपाल। तुलसी मानस प्रतिष्ठान भोपाल और संस्कृति विभाग के संयुक्त तत्वावधान में गोस्वामी तुलसीदासजी की जयंती के अंतर्गत सर्वप्रथम पंडित रामकिंकर सभागार में श्री हनुमानलीला नाट्य का आयोजन किया गया। इस लीला का मंचन श्री चन्द्रमाघव बारिक, भोपाल के निर्देशन में किया गया। इस अवसर पर बड़ी संख्या में श्रद्धालु दर्शक उपस्थित थे।

श्री हनुमानलीला नाट्य में 40 कलाकारों ने भाग लिया। इस अवसर पर प्रदेश के उप मुख्यमंत्री श्री जगदीश देवड़ा उपस्थित थे। उन्होंने सभी पचास कलाकारों को प्रोत्साहन स्वरूप राशि भी प्रदान की। श्री चन्द्रमाघव बारिक का स्वागत पुष्पगुच्छ से कार्याध्यक्ष श्री रघुनंदन शर्मा ने किया। तत्पश्चात् गोस्वामी तुलसीदासजी के चित्र पर पुष्पांजलि एवं दीप प्रज्जवलन किया गया। इस अवसर पर मा. मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव, परमपूज्य स्वामी गोविन्द सिंह गिरि जी, अयोध्या, परमपूज्य दीदी मंदाकिनी श्रीरामकिंकर, श्री रघुनंदन शर्मा, कार्याध्यक्ष श्री शिवशेखर शुक्ला, प्रमुख सचिव संस्कृति विभाग, श्री एन.पी. नामदेव, मौजूद थे।

परमपूज्य श्री गोविन्ददेव जी नामदेव, अयोध्या को पं.रामकिंकर उपाध्याय सम्मान अलंकरण से मा.मुख्यमंत्री डॉ.मोहन यादव के द्वारा शाल, श्रीफल, सम्मान पट्टिका एवं राशि 2 लाख प्रदान कर सम्मानित किया गया। इस समारोह में माननीय डॉ.मोहन यादव, मुख्यमंत्री म.प्र.शासन, संस्कृति विभाग के प्रमुख सचिव श्री शिवशेखर शुक्ला, सारस्वत अतिथि परम पूज्य दीदी मंदाकिनी श्रीरामकिंकर एवं कार्याध्यक्ष श्री रघुनंदन शर्मा उपस्थित थे।

इस अवसर पर अपने आशीर्वचन में परमपूज्य स्वामी गोविन्ददेव गिरि ने कहा कि भारत माता की जय एक विशेष भाव रखता है। प्रभु श्रीराम के मंगलमय चरित्र एवं सारे गुणों का एक भाव एक दर्शन और जीवन मूल्यों को समर्पण भाव से रहने की प्रेरणा देता है। प्रभु श्रीराम को जानने से धर्म अपने आप ही आयेगा। श्रीराम का चरित्र, रामायण का दर्शन हमें शिक्षा देता है कि हम अपने जीवन में नैतिक मूल्य, आदर्श और जीवन व्यवहार के प्रति सजग रहे। उन्होंने आगे कहा कि राममंदिर का निर्माण राष्ट्रनिर्माण का उत्थान है। आधुनिक युग में गोस्वामी तुलसीदास का पाथेय युग तुलसी पंडित रामकिंकर उपाध्याय रहे हैं। उन्होंने अलंकरण सम्मान के लिये मध्यप्रदेश शासन का विशेष आभार व्यक्त किया।

मुख्य अतिथि डॉ.मोहन यादव मुख्यमंत्री ने कहा तुलसी जयंती का यह आयोजन अत्यंत अद्‌भुत और सनातन संस्कृति के लिये अत्यंत महत्वपूर्ण आयोजन है। यह परम सौभाग्य का क्षण है कि आज हम परमपूज्य स्वामी गोविन्ददेव जी गिरि का युगतुलसी पद्‌मभूषण पंडित रामकिंकर उपाध्याय राष्ट्रीय अलंकरण सम्मान से विभूषित कर रहे हैं।

समारोह में माननीय मुख्यमंत्री जी 'तुलसी मानस श्रीराम संग्रहालय' के निर्माण के लिए प्रतिष्ठान को राशि रू. 5 करोड़ की वित्तीय सहायता की भी सार्वजनिक घोषणा की। इसका सभी उपस्थित जनों ने विपुल ने करतल ध्वनि से सत्कार किया।

अरूण गुप्ता

स्वतंत्रता दिवस - 2025

प्रतिवर्षानुसार इस वर्ष भी तुलसी मानस प्रतिष्ठान में प्रातः 9:00 बजे 15 अगस्त को कार्याध्यक्ष श्री रघुनंदन शर्मा के मुख्य आतिथ्य में ध्वजारोहण किया गया। आपने स्वतंत्रता दिवस पर सभी को शुभकामनाएँ देते हुए कहा कि हमें अपने कर्त्तव्यों का निष्पक्ष पालन करने के लिए प्रतिबद्ध रहना चाहिए। तभी अधिकारों की रक्षा हो सकती है।

इस अवसर पर कार्याध्यक्ष श्री रघुनंदन शर्मा, श्री विजय अग्रवाल कोषाध्यक्ष, श्री माघवसिंह दांगी, श्री अरूण गुप्ता, श्री महेश दुबे, निदेशक, श्री महेन्द्र निगम, पं. श्री अनिरूद्ध तिवारी, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयीन संस्थान के निदेशक श्री एस.के.पांडे, श्री मोर्य जी, श्री दीपक जी, सुश्री योगिता तिवारी, सुश्री ज्योति जी के अलावा मानस भवन के कर्मचारीगण श्री संदीप परिहार, श्रीमती सीमा नेमा, श्री राधेश्याम रजक, श्री भरत सिंह परमार उपस्थित थे।

कार्याध्यक्ष श्री रघुनंदन शर्मा ने इस अवसर पर सभी को गणतंत्र दिवस की हार्दिक बधाई दी। मिष्ठान वितरण के साथ कार्यक्रम संपन्न हुआ।

मुख्यमंत्री को कृतज्ञता ज्ञापन पत्र

तुलसी मानस भवन के रामकिंकर सभागार में रामकिंकर शताब्दी 2025 के सम्मान से पद्म भूषण परम पूज्य गोविंद गिरि जी महाराज को सम्मानित करते हुए मा. मुख्यमंत्री मध्य प्रदेश शासन डॉ. मोहन यादव ने यह घोषणा भी की कि तुलसी मानस प्रतिष्ठान को जो तुलसी मानस श्री राम संग्रहालय की स्थापना करने जा रहा है के लिए मध्य प्रदेश शासन की ओर से राष्ट्रीय रुपया पाँच करोड़ की सहायता प्रदान की जाएगी। मुख्यमंत्री जी की इस उदारता से अभिभूत प्रतिष्ठान के पदाधिकारी कार्याध्यक्ष श्री रघुनंदन शर्मा, संयोजक श्री राजेन्द्र शर्मा, सचिव श्री कैलाश जोशी, प्रधान संपादक तुलसी मानस भारती श्री प्रभुदयाल मिश्र, श्री विजय अग्रवाल कोषाध्यक्ष तथा श्री अरुण गुप्ता आंतरिक अंकेक्षण आदि ने दिनांक 28 अगस्त, 2025 को मुख्यमंत्री निवास पर उनसे भेंट कर उन्हें कृतज्ञता ज्ञापित की। इस अवसर पर माननीय मुख्यमंत्री प्रतिष्ठान को यथावत आगे भी शासन के आवश्यक सहयोग के प्रति आश्वस्त कर अपनी सनातन संस्कृति के प्रति संनिष्ठा का प्रकटीकरण किया।

:- कृतज्ञता ज्ञापन :-

प्रति,

मा.डॉ.मोहन यादव
मुख्यमंत्री मध्यप्रदेश शासन
श्यामला हिल्स,भोपाल

विषय : तुलसी मानस प्रतिष्ठान के संग्रहालय हेतु आपकी संघोषणा।

मान्यवर,

पद्मविभूषण युगतुलसी पं.रामकिंकर उपाध्याय की स्मृति में दिनांक 2 अगस्त 2025 को अलंकरण सम्मान समारोह के प्रतिष्ठापूर्ण आयोजन में आपकी उपस्थिति सर्वथा प्रेरणास्पद और उत्साहपूर्ण थी।

इस अवसर पर पद्मविभूषण श्री गोविन्द देवजी गिरि महाराज को प्रदेश सरकार के शीर्ष पुरुष के रूप में आपके द्वारा सम्माानित करना प्रदेश सरकार और तुलसी मानस प्रतिष्ठान के लिये एक गौरवपूर्ण क्षण था। इसके लिये हम प्रतिष्ठान परिवार की ओर से आपके सदाशयी सौजन्य के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं।

इस पुनीत अवसर पर आपने अपनी उदारता और वरेण्य गरिमा का प्रदर्शन करते हुए ''तुलसी मानस–श्रीराम संग्रहालय'' की स्थापना के संकल्प की पूर्ति के लिये जो राशि रू.5 करोड़ प्रदेश सरकार की ओर से प्रदान करने की उद्घोषणा की है, वह आपकी राष्ट्रीय सांस्कृतिक धारा की संवर्धनकारी उदारता का परिचय है।

निश्चित ही इस संकल्पित उद्घोषणा से प्रतिष्ठान की शक्ति बढ़ी है, एवं इससे आपकी संस्कृति संवर्धन की नीति की देश–देशान्तर में व्याप्ति स्वाभाविक है।

आपके इस औदार्य और आपकी गरिमामयी दृष्टि के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के साथ–साथ कृतज्ञता प्रकट करते हैं। कृपया प्रतिष्ठान के इस सम्मान भाव को स्वीकार कर अनुग्रहीत करें।

तुलसी मानस प्रतिष्ठान /तुलसी मानस भारती की आजीवन सदस्यता

तुलसी मानस प्रतिष्ठान के उपनियम क्रमांक 6(2)(घ) में शुल्क संबंधी निम्न संशोधन हुआ है –

(घ) सामान्य सदस्य – जो मानस प्रेमी रु. 10,000/– (रूपये दस हजार) एककालिक शुल्क देंगे वे इस संस्था के सामान्य सदस्य होंगे। पूर्व आजीवन सदस्य भी सामान्य सदस्य माने जायेंगे।

उक्त संशोधन की सर्वसम्मति जानकारी न होने के कारण सभी सदस्यो ने अपनी आजीवन सदस्यता का उक्त शुल्क के अनुसार समोन्नयन नहीं किया है। अनेक सदस्यो के निवास परिवर्तित तथा उनके देवलोक गमन की सूचना भी न होने से भी पत्रिका की नियमित प्रेषण बाधित हो रही है।

अतः अनुरोध है कि कृपया आप अपनी आजीवन सदस्यता यथाशीघ्र संशोधन के अनुसार समोन्नयन करावे तथा तुलसी मानस भारती पत्रिका की आजीवन सदस्यता प्राप्त करने के लिए अपेक्षित सदस्यता शुल्क प्रतिष्ठान के बैंक खाते अथवा चेक के माध्यम से जमा कराने का कष्ट करें।

प्रतिष्ठान का बैंक खाता सम्बंधी विवरण पत्रिका के पृष्ठ क्रमांक 1 में नीचे दर्शाया गया है ।

आशा है आप उक्त दायित्व का शीघ्र निर्वाह करेंगे ताकि मानस प्रतिष्ठान की वार्षिक आमसभा सूचना के साथ–साथ तुलसी मानस भारती पत्रिका की भी निःशुल्क प्रदाय की निरंतरता बनाई रखी जा सके।

आगे यहां यह भी स्पष्ट किया जाता है कि आजीवन सदस्यता सम्बंधी इस प्रावधान का पालन न करने की स्थिति में इस श्रेणी के सदस्यों को भविष्य में "तुलसी मानस भारती" पत्रिका निःशुल्क प्रेषित नहीं की जायेगी ।

यहां यह अवश्य किया जाता है कि पत्रिका की आजीवन, वार्षिक और पंचवर्षीय सदस्यता संबंधी पत्रिका में दर्शित व्यवस्था इससे अप्रभावित रहेगी ।

रघुनंदन शर्मा
कार्याध्यक्ष

प्रति
अध्यक्ष
मुख्या कार्यपालन अधिकारी

विषय : तुलसी मानस प्रतिष्ठान की सांस्थानिक सदस्यता / संबद्धता

मान्यवर,

मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल श्यामला हिल्स में तुलसी मानस प्रतिष्ठान, जिसे संक्षेप में 'मानस भवन' के रूप में जाना जाता है, विगत आधी सदी के भी अधिक समय से देश और देशान्तर में राष्ट्रीय सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और साहित्यिक गतिविधियों के संप्रसार में निरत है।

हमारे पंजीकृत उप नियमों के प्रावधान के अनुसार इसमें समानधर्मा संस्थाओं को संबद्ध करते हुए प्रतिष्ठान के संचालक मंडल में उन्हें उचित प्रतिनिधित्व देना भी है। हमारे सामान्य व्यक्तिगत सदस्यों की संख्या जहाँ लगभग 1500 है, वहीं सांस्थानिक सदस्य संख्या अत्यल्प ही है।

इस स्थिति पर विचार करते हुए प्रतिष्ठान के पंजीकृत उप नियमों के अनुसार समान उद्देश्यों और ध्येयों को सम्पन्न करने वाले अन्य सार्वजनिक प्रतिष्ठान और संस्थानों को उक्त जानकारी देते हुए उनसे मानस प्रतिष्ठान से संबद्धत्ता स्थापित कर इसकी गतिविधियों में सहयोग हेतु आह्वान का निर्णय लिया गया है।

सांस्थानिक संबद्धता हेतु सामान्य शुल्क रुपये 10,001 है जिसे संयुक्त और व्यापक गतिविधियों मैं विस्तार हेतु पारस्परिक विचार पूर्वक आगे विनिश्चित किया जा सकता है। यहाँ यह स्पष्ट किया जाना योग्य है कि प्रतिष्ठान के संचालक मंडल में इस श्रेणी के दो संचालकों के पद विनिर्धारित किए गए हैं।

मैं सहर्ष उक्त सूचना आपको प्रेषित करते हुए आपकी संस्था के प्रतिष्ठान से सम्बद्ध होने का आह्वान करता हूँ और आशा करता हूँ कि इस प्रकार हम समन्वित तौर पर भारतीय राष्ट्रीय गौरव के सनातन मूल्यों के संरक्षण और संप्रसार कार्य में अधिक तीव्रता से प्रवृत्त हो सकेंगे।

रघुनंदन शर्मा
कार्याध्यक्ष

मध्यप्रदेश सरकार का संकल्प

अक्षय जल, सुरक्षित कल

नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री

जल गंगा संवर्धन अभियान

‘जल की हर बूंद में आने वाले कल का भविष्य छिपा है। इसलिए इस अमूल्य धरोहर की किसी भी मूल्य पर रक्षा करना हमारा दायित्व है।’

- डॉ. मोहन यादव, मुख्यमंत्री

जल संरक्षण का ‘जन संकल्प’

जल संचय में वृद्धि

- ₹2048 करोड़ लागत के 83 हजार से अधिक खेत तालाबों का निर्माण पूर्ण, जिससे खेत का पानी खेत में सिंचित होगा
- ₹254 करोड़ लागत से 1 लाख से अधिक कूप रीचार्ज
- अमृत सरोवर 2.0 के तहत ₹ 354 करोड़ लागत से 1 हजार से अधिक नए अमृत सरोवरों का निर्माण
- शहरी क्षेत्रों में 3300 से अधिक जल स्त्रोतों का पुनर्जीवन, 2200 नालों की सफाई एवं 4000 वर्षा जल संचयन संरचनाओं का निर्माण पूर्ण

जनभागीदारी

- 40 लाख लोगों की भागीदारी से 5 हजार से अधिक जल स्त्रोतों का हुआ जीर्णोद्धार
- My Bharat पोर्टल के माध्यम से 2.30 लाख से अधिक जलदूत बनाए गए
- ग्रामीण क्षेत्रों में पानी चौपाल का आयोजन

तकनीकी नवाचार

- GIS आधारित SIPRI सॉफ्टवेयर के उपयोग से जल स्त्रोतों का चयन एवं AI आधारित मॉनिटरिंग की गई
- नर्मदा परिक्रमा पथ एवं अन्य तीर्थ मार्गों के डिजिटलीकरण के जरिए श्रद्धालुओं की सुविधाओं का रखा जा सकेगा ख्याल

पर्यावरणीय एवं कृषि प्रभाव

- 57 प्रमुख नदियों में मिलने वाले 194 से अधिक नालों का चिह्नांकन एवं उनके शोधन के लिए योजना तैयार
- जैव विविधता संरक्षण हेतु घड़ियाल और कछुओं का किया गया जलावतरण
- 145 नदियों के उद्गम क्षेत्रों को चिन्हित कर हरित विकास हेतु योजना तैयार
- अविरल निर्मल नर्मदा योजना में 5600 हेक्टेयर में पौधरोपण प्रारंभ
- वन्य जीवों के लिए जल की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु 2500 से अधिक तालाब, स्टॉप डैम का निर्माण
- पौधरोपण हेतु लगभग 6 करोड़ पौधों की नर्सरी विकसित

वॉटरशेड हेतु कार्य

- ₹1200 करोड़ लागत की 91 वॉटरशेड परियोजनाएं स्वीकृत, 5.5 लाख हेक्टेयर क्षेत्र को मिलेगी सिंचाई सुविधा
- 9000 से अधिक जल संरक्षण संरचनाओं के जरिए किसानों को 1 वर्ष में दो से तीन फसलों का मिल रहा लाभ

D19160/25

D19160/25

स्वामी-तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश, प्रकाशक श्री रघुनंदन शर्मा और मुद्रक श्री राधिका प्रकाशन प्रा. लि., 26-ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, ज़ोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल 462011 से मुद्रित और तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश, मानस भवन, भोपाल से प्रकाशित।
प्रधान संपादक : प्रभुदयाल मिश्र एवं संपादक : देवेन्द्र कुमार रावत